वर्ष : 4, अंक : 13

जनवरी-मार्च 2020

हिन्दुस्तानी भाषा भारती

(भारतीय भाषाओं के प्रचार-प्रसार और संवर्धन को समर्पित त्रैमासिक पत्रिका)

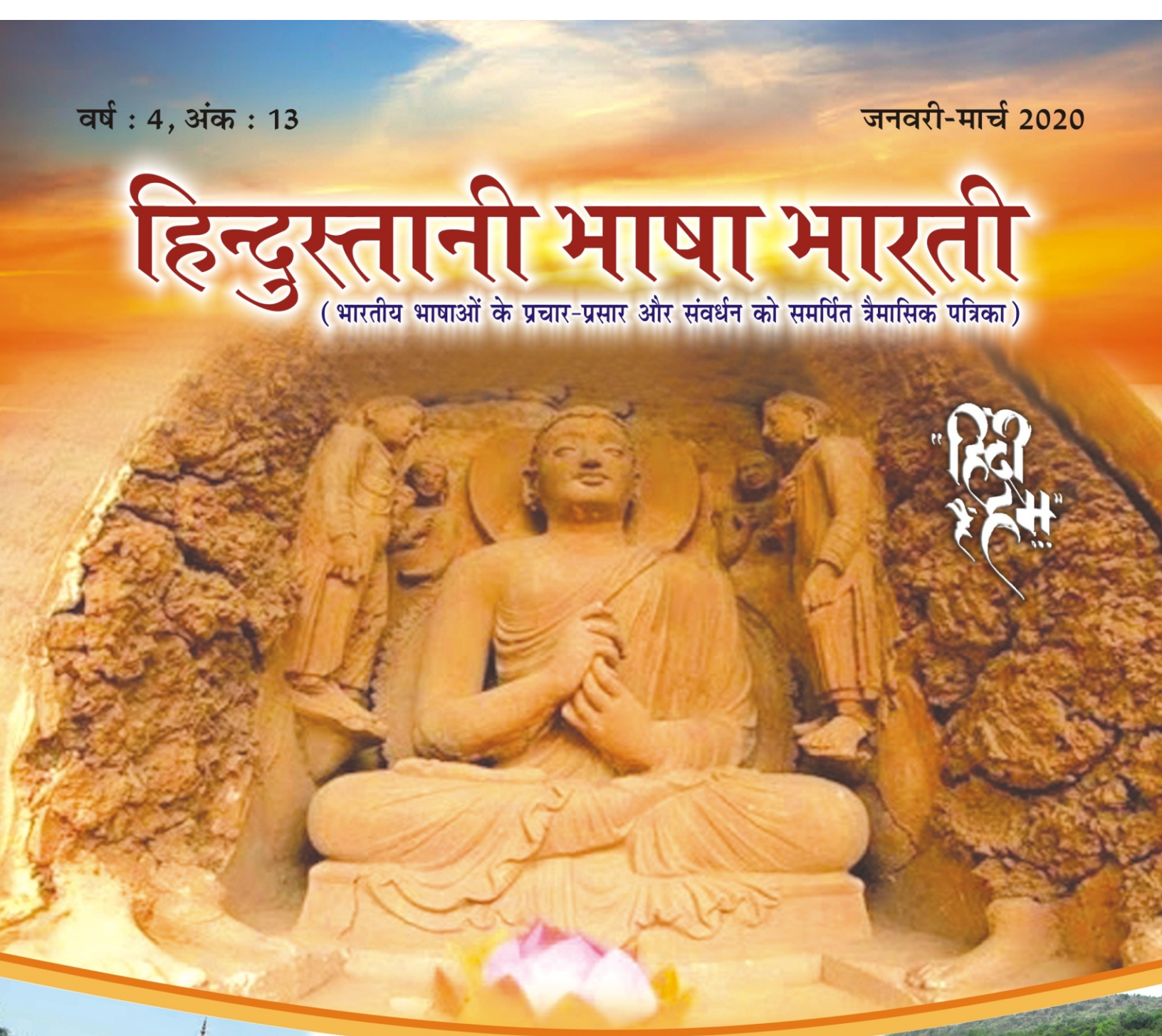

हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी
निजभाषोन्नतौ राष्ट्रोन्नतिः

विशेष :

'हिन्दी भाषा साहित्य में संस्कृत का योगदान'

'मेधावी छात्र एवं शिक्षक सम्मान'

हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी द्वारा प्रकाशित पुस्तकें

हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी
निजभाषोन्नतौ राष्ट्रोन्नतिः

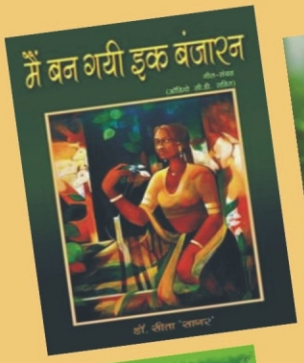

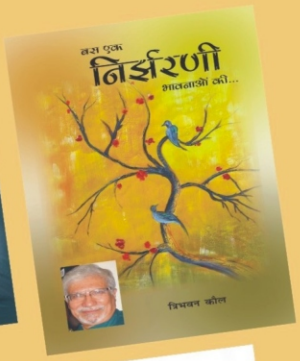

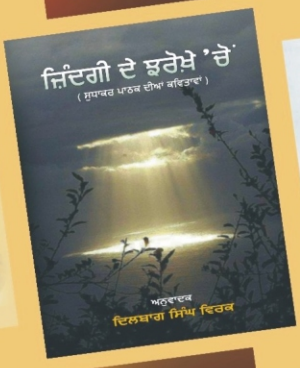

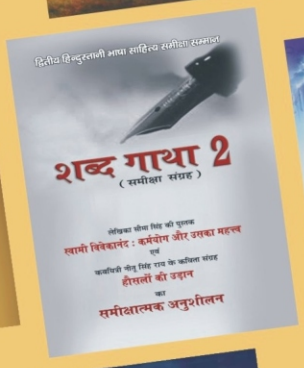

वर्ष : 4, अंक : 13

हिन्दुस्तानी भाषा भारती

मूल्य : 30 रुपये

(भारतीय भाषाओं के प्रचार-प्रसार और संवर्धन को समर्पित त्रैमासिक पत्रिका)

सम्पादक
सुधाकर बाबू पाठक

प्रबन्ध सम्पादक : **विजय कुमार शर्मा**
परामर्श सम्पादक : **सुरेखा शर्मा**
संयुक्त सम्पादक : **राजकुमार श्रेष्ठ**
सह सम्पादक : **सागर समीप**
उप सम्पादक : **सरोज शर्मा**
: **सुषमा भण्डारी**
: **सोनिया अरोड़ा**
: **पुलकित खन्ना**
सम्पादकीय सलाहकार : **डॉ. वनीता शर्मा**
विधि सलाहकार : **अमरनाथ गिरि**
वित्तीय सलाहकार : **राम सिंह मेहता**

कार्यालय :
हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी
3675, राजा पार्क, रानी बाग, दिल्ली-110034
ई-मेल : info@hindustanibhashaakadami.com
hindustanibhashabharati@gmail.com
वेबसाइट : www.hindustanibhashaakadami.com
सम्पर्क सूत्र : 09873556781, 09968097816

■ पत्रिका में प्रकाशित लेखों में लेखकों के अपने विचार हैं । प्रकाशक का इनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है ।
■ सभी विवादों का निपटारा दिल्ली/नई दिल्ली की सीमा में आने वाली सक्षम अदालतों और फोरमों में ही किया जाएगा ।
■ सम्पादन एवं संचालन पूर्णत: अवैतनिक और अव्यावसायिक है ।

प्रकाशक, सम्पादक व मुद्रक सुधाकर बाबू पाठक द्वारा स्वामी हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी ट्रस्ट, 3675, राजा पार्क, शकूर बस्ती, दिल्ली-110034 के लिए प्रकाशित और सन्नी प्रिन्टर्स, बी-234, नारायणा इन्डस्ट्रियल एरिया, फेस-1, नई दिल्ली-110028 से मुद्रित ।

विषय सूची

संपादकीय : भाषणों से नहीं आचरण से बचेंगी भारतीय भाषाएँ 05
विशेष रिपोर्ट : 'मेधावी छात्र एवं शिक्षक सम्मान समारोह-2019' 06
विशेष रिपोर्ट : 'भाषा गौरव शिक्षक सम्मान' 09
साक्षात्कार : डॉ. जीतराम भट्ट, सचिव, हिन्दी अकादमी, दिल्ली 11
साक्षात्कार : ललित कुमार, लेखक, ब्लॉगर, कविता कोश के संस्थापक 14
लोकोक्तियाँ 17
संस्कृत भाषा की वर्तमान स्थिति एवं हिन्दी के बीच अन्तर्सम्बन्ध-संतोष बंसल 18
कंप्यूटर के लिए अनुकूल है देवनागिरी लिपि 21
संस्कृत भाषा का वैश्विक परिदृश्य - डॉ. दिग्विजय कुमार शर्मा 22
संस्कृत : सार्वभौमिक कल्याण की भाषा - डॉ. रमेश पोखरियाल 'निशंक' 25
हिन्दी को कमजोर करने की कोशिश -प्रो. गिरीश्वर मिश्र 26
भाषा तकनीकें तो आ गईं, आगे क्या? -बालेन्दु शर्मा दाधीच 28
हिन्दी भाषा साहित्य में संस्कृत का योगदान -पं. रामकृष्ण वाजपेयी 30
भारत की कुछ भाषाएं विलुप्त होने के कगार पर 31
पुराने गौरव की ओर लौट रही है प्राचीनतम भाषा संस्कृत -सुनील बादल 32
हिन्दी की गौरवपूर्ण स्थिति - प्रो. शरद नारायण खरे 34
संस्कृत भाषा का महत्व और हिन्दी भाषा साहित्य में संस्कृत.....-सुरेखा शर्मा 36
शिक्षा और रोजगार के बीच संस्कृत भाषा की चुनौती -डॉ. शिल्पी सेठ 38
भारतीय वांग्मय में 'लिंचिंग' शब्द नहीं है लेकिन... -चन्द्र प्रकाश झा 39
समाचार माध्यमों में अपनी अस्मिता की लड़ाई लड़ रही हिन्दी -लोकेन्द्र सिंह 40
भाषासु मुख्या मधुरा दिव्या गीर्वाण भारती -डॉ. वनीता शर्मा 43
हिन्दी की हत्या के विरुद्ध -प्रभु जोशी 44
'दुनिया की भाषाओं के लिए बेहतर विकल्प है:देवनागरी' -डॉ. लता अग्रवाल 46
हिन्दी के प्रति विदेशियों के विचार 49

हिन्दुस्तानी भाषा भारती (त्रैमासिक पत्रिका) के प्रकाशित अंक

क्षेत्रीय भाषा, साहित्य, संस्कृति और लोक कलाओं पर केंद्रित विशेषांक :

अकादमी अपनी एक त्रैमासिक पत्रिका ' हिन्दुस्तानी भाषा भारती' का प्रकाशन करती है जिसमें हिन्दी के अतिरिक्त अन्य भारतीय भाषाओं के लेखों और अन्य भारतीय भाषाओं की अनुदित रचनाओं को प्रमुखता दी जाती है। अब तक बुंदेलखंडी, छत्तीसगढ़ी, राजस्थानी, कुमाऊँनी, भोजपुरी, पंजाबी, पूर्वोत्तर, सिन्धी, नेपाली, मैथिली, अवधी और डोगरी आदि भाषाओं को ध्यान में रखते हुए इनसे संबन्धित साहित्य, संस्कृति, लोक कला आदि को समेटे विशेषांक निकाले जा चुके हैं।

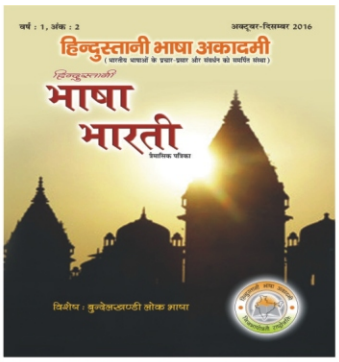

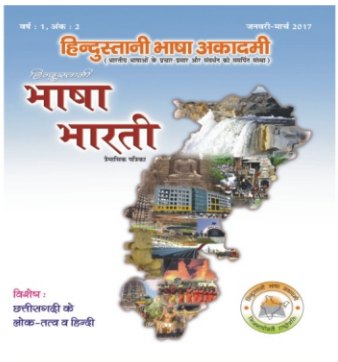

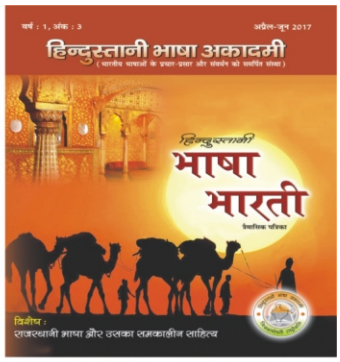

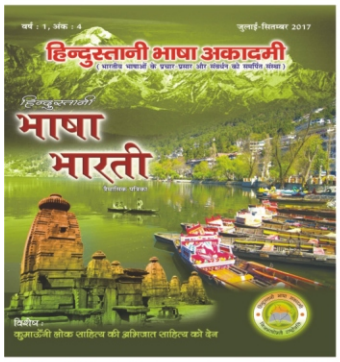

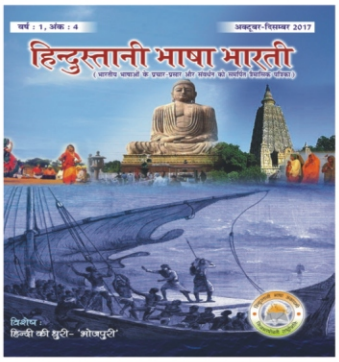

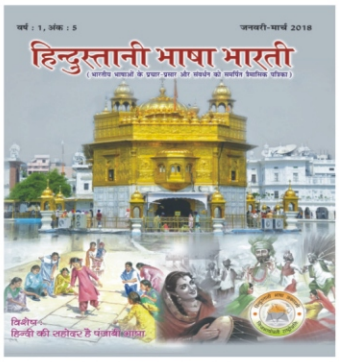

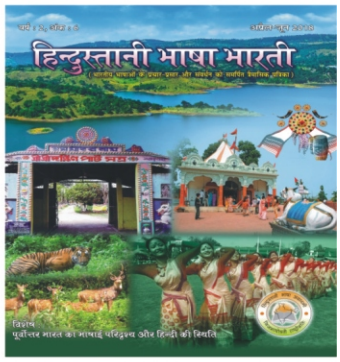

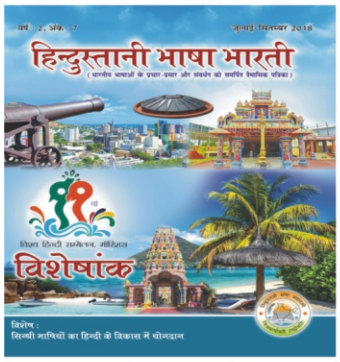

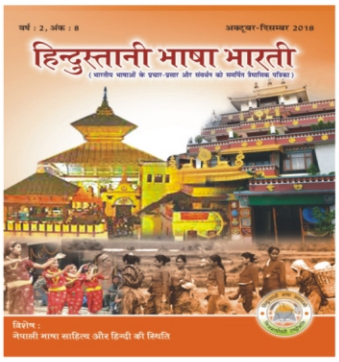

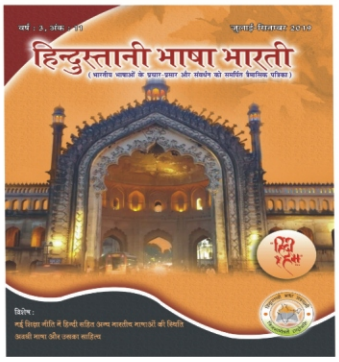

सम्पादकीय

भाषणों से नहीं आचरण से बचेंगी भारतीय भाषाएँ

सुधाकर पाठक
सम्पादक एवं अध्यक्ष,
हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी

हिन्दी सहित सभी भारतीय भाषाओं के संवर्धन-संरक्षक को समर्पित हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी की यह यात्रा नित्य नए-नए सोपानों को छूती हुई प्रगति के पथ पर अग्रसर है । हमें इस बात की खुशी हो रही है कि अब इस कठिन यात्रा के सुखद परिणाम आने लगे हैं। आप अकादमी की इस यात्रा के मार्गदर्शक और साक्षी रहे हैं । कहा जाता है कि अपनों से खुशियाँ बांटने से बढ़तीं हैं, इसलिए कुछ छोटी-छोटी खुशियाँ आपसे साझा कर रहा हूँ । हमारे लिए संतोष की बात है कि एक स्ववित्तपोषित संस्था की यह त्रैमासिक पत्रिका 'हिन्दुस्तानी भाषा भारती' बिना किसी सरकारी अनुदान या वित्तीय सहयोग के अपने निर्बाध प्रकाशन के तीन वर्ष पूरे करके चौथे वर्ष में प्रवेश कर गई है । इस अवधि में पत्रिका ने भारतीय भाषा प्रेमियों और साहित्य प्रेमियों के दिलों में अपना विशेष स्थान बनाया है । इसी खुशी से जुडी एक और महत्वपूर्व बात है कि प्रतिष्ठित ऑनलाइन पोर्टल/लाइब्रेरी 'कविता कोश' ने इस पत्रिका के सभी अंकों को अपने 'ई-पत्रिका' कॉलम में स्थान दिया है, जहां जाकर पाठक पत्रिका के सभी अंक ऑनलाइन पढ़ सकते है ।

अकादमी समय- समय पर भाषा और साहित्य के प्रोत्साहन हेतु विभिन्न योजनाओं को कार्यान्वित करती है जैसे नव समीक्षकों को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से 'साहित्य समीक्षा सम्मान' और उनकी साझा समीक्षाओं की पुस्तकों का निशुल्क प्रकाशन, काव्य की विधाओं को प्रोत्साहित करने के लिए 'काव्य प्रतिभा सम्मान' और उनकी रचनाओं की साझा पुस्तकों का नि:शुल्क प्रकाशन, नवांकुर रचनाकारों को मंच देने के उद्देश्य से 'काव्य प्रतिभा खोज' योजना, विभिन्न कार्यशालाओं, संगोष्ठियों, परिचर्चाओं का समय-समय पर आयोजन आदि ।

इन सभी योजनाओं से अलग भाषाओं के संवर्धन एवं संरक्षण के लिए जिस कार्य ने हमें सबसे अधिक संतुष्टि दी है वह है भारतीय भाषाओं के मेधावी छात्रों और उनके शिक्षकों को सम्मानित करने का कार्य । पिछले तीन वर्षों से दिल्ली सहित गाजियाबाद, गुरुग्राम में हम इन आयोजनों को कर रहे हैं । सम्मानित होने वाले मेधावी छात्रों की संख्या में गुणात्मक वृद्धि हुई है । दिल्ली में प्रथम वर्ष 245, द्वितीय वर्ष 1725 और इस वर्ष यह संख्या बढ़कर 3500 हो गई । बात मात्र संख्या बढ़ने की नहीं है, छात्रों का, शिक्षकों का, अभिवावकों का बढ़ता उत्साह और विद्यालयों में शिक्षकों व छात्रों को मिल रहे सम्मान से मन हर्षित है ।

यह हमारे लिए संतोष की बात है कि जिन कॉन्वेंट और अन्तराष्ट्रीय विद्यालयों ने पिछले वर्षो में इन योजनाओं में बच्चों को सम्मलित नहीं होने दिया था अब न केवल स्वयं प्रविष्टियाँ भेज रहे हैं, विद्यालय की बसों में छात्रों और शिक्षकों को समारोहों में सम्मलित होने भेज रहे हैं बल्कि हमारे इन आयोजनों के बाद अपने विद्यालयों में अलग से पूरे विद्यालय के सामने इन मेधावी छात्रों और उनके शिक्षकों को पुन: सम्मानित भी कर रहे हैं । विद्यालयों की आधिकारिक वेबसाइट पर इन आयोजनों के चित्र देखकर लगता है कि धीरे-धीरे ही सही लेकिन हम अपने उद्देश्यों में सफल हो रहे हैं ।

जीवन में मिलने वाला हर छोटा-बड़ा सम्मान बहुत महत्वपूर्ण होता है । यह सम्मान खुशी देने के साथ कर्तव्यों का बोध भी कराता है। भाषा शिक्षकों और छात्रों को केंद्र में रखकर जिस उद्देश्य के लिए इन समारोहों को आयोजित किया जा रहा है वह तब तक पूर्ण रूप से सफल नहीं हो पायेगा जब तक सम्मानित होने वाले शिक्षक और छात्र इसके आयोजन के पीछे की भावना को नहीं समझेंगे। अगर वह इसे मात्र एक मेला या उत्सव मानकर सम्मलित होंगे और अपने कर्तव्यों को नहीं समझेंगे तो यह आयोजन औपचारिकता मात्र रह जाएंगे। अगर सम्मानित होने वालों ने इसके उद्देश्यों को गंभीरता से ले लिया तो भारतीय भाषाओं के लिए यह स्वर्ण युग होगा। कल्पना कीजिये कि प्रत्येक वर्ष भारतीय भाषाओं के सैकड़ों की संख्या में सम्मानित होने वाले 'भाषा रत्न', 'भाषा दूत', 'भाषा गौरव' और 'भाषा प्रहरी' जब एकजुट होकर अपनी भाषाओं को बचाने के लिए उठ खड़े होंगे तो यह एक नई भाषा क्रांति का जन्म होगा। मेरा भाषा और सहित्य के लिए समर्पित सभी संस्थाओं और महानुभावों से विनम्र आग्रह है कि इस पवित्र यज्ञ की ज्वाला को कम न होने दें और यथा योग्य अपनी आहुति से इसे प्रज्ज्वलित रखें। शुभकामनाओं सहित...

विशेष रिपोर्ट

मेधावी छात्र एवं शिक्षक सम्मान समारोह- 2019
भारतीय भाषाओं की नई पौध को सींचती हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय कला केन्द्र के सहयोग से हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी द्वारा बुधवार, 4 मार्च 2020 को इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय कला केन्द्र के विशाल प्रांगण में दिल्ली प्रदेश के भारतीय भाषाओं के मेधावी छात्रों एवं उनके भाषा शिक्षकों के सम्मान में 'मेधावी छात्र एवं शिक्षक सम्मान समारोह' का आयोजन सम्पन्न हुआ। समारोह में दिल्ली प्रदेश के 115 विद्यालयों के 3500 छात्र, 350 भाषा शिक्षकों के साथ-साथ अभिभावकों, साहित्यकारों, विद्वत जनों एवं पत्रकारों की गरिमामयी उपस्थिति रही ।

समारोह के मुख्य अतिथि के रूप में इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय कला केन्द्र के सदस्य सचिव डॉ. सच्चिदानंद जोशी उपस्थित थे। दिल्ली विश्वविद्यालय के प्रतिष्ठित हँसराज कॉलेज की प्राचार्या प्रो. रमा शर्मा ने समारोह की अध्यक्षता की । विशिष्ट अतिथि के रूप में हिन्दी अकादमी, दिल्ली के सचिव डॉ. जीतराम भट्ट, फिजी दूतावास के परामर्शदाता श्री नीलेश रोनिल कुमार तथा हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी के अध्यक्ष श्री सुधाकर पाठक मंचासीन थे । दीप प्रज्ज्वलन एवं सामूहिक राष्ट्रगान से कार्यक्रम का विधिवत शुभारंभ हुआ।

अपने स्वागत उद्बोधन में श्री सुधाकर पाठक ने विशाल जन समूह को संबोधित करते हुए कहा कि भाषिक विविधता और भाईचारा ही भारतीय संस्कृति की मूलभूत विशेषता है। निज भाषा के प्रति जिम्मेदारी का बोध होना ही हर भारतीय नागरिक का कर्तव्य है। भारतीय भाषाओं के इन्हीं नवांकुरों को पोषित करने के उद्देश्य से अकादमी प्रत्येक वर्ष इस तरह के आयोजन करती है जो भाषाओं की नींव को और भी मजबूत करता है। दिल्ली में तीसरी बार इस तरह का आयोजन सम्पन्न किया जा रहा है जिसके सकारात्मक और सुखद परिणाम देखने को मिल रहे हैं। इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय कला केन्द्र के सदस्य सचिव, डॉ. सच्चिदानंद जोशी ने समारोह में उपस्थित विविध भाषाओं के छात्रों, शिक्षकों एवं अभिभावकों को एक ही प्रांगण में किसी सुंदर पुष्प माला की तरह एकत्रित होते हुए देख अपने उद्बोधन में कहा कि भाषाओं के संवर्धन के लिए यह एक बहुत महत्वपूर्ण आयोजन है जहाँ दिल्ली प्रदेश के 3500 मेधावी छात्रों का विशाल समागम है, जिन्होंने अपनी भाषा में 90 प्रतिशत से अधिक अंक प्राप्त कर इस बात का साक्ष्य प्रस्तुत किया है कि अपनी भाषाओं को लेकर वे, उनके शिक्षक तथा उनके विद्यालय कितने चिंतित हैं । अपनी भाषा में शत प्रतिशत अंक प्राप्त करना अपने आप में पूरे विश्व के लिए एक मिशाल है । यह केवल दिल्ली प्रदेश का ही नहीं, पूरे भारत का ही नहीं बल्कि वैश्विक चमत्कार है ।

राजकुमार श्रेष्ठ

अकादमी के कार्यों की सराहना करते हुए उन्होंने कहा कि जब हम अपनी मातृभाषा के लिए इतने सजग होकर काम करते हैं तभी देश की उन्नति होती है और यदि हमें भारत को विश्व के श्रेष्ठतम स्थान पर पहुंचाना है तो भारतीय भाषाओं का सम्मान करना होगा । आने वाले वर्षों में हमारे भाषा के प्रति गौरव और सम्मान प्राप्त करना हो तो हमें हमारे विद्यालयों में इसी तरह उत्साहवर्धक कार्य करने होंगे । हिन्दी अकादमी, दिल्ली के सचिव डॉ. जीतराम भट्ट जी ने कहा कि जब तक हम अपनी मातृभाषा और उसके महत्व को समझ नहीं पाएंगे तब तक हम देश को नहीं पहचान पाएंगे ।

देश की संस्कृति, सभ्यता, इतिहास और गौरव के विषयों पर गर्व करने के लिए सर्वप्रथम मातृभाषा के प्रति प्रेम और सद्भाव होना आवश्यक है । उन्होने कहा हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी हमारी जैसी सरकारी योजनाओं के मार्ग को प्रशस्त कर रही है । महात्मा गाँधी जी के उद्धरण को उद्धृत करते हुए हँसराज कॉलेज की प्राचार्या, प्रो. रमा शर्मा जी ने कहा कि, जिस देश की अपनी राष्ट्रभाषा नहीं होती वह राष्ट्र गूंगा होता है। राष्ट्रभाषा के बिना किसी देश के उत्थान की संकल्पना निरर्थक है। आज समय आ गया है कि हम सब मिलकर इस महायज्ञ में अपने-अपने योगदान की आहूति दें और सभी भारतीय भाषाओं का सम्मान करते हुए देश की एक राष्ट्रभाषा की मांग करें। अकादमी के उद्देश्यों की सराहना करते हुए उन्होंने 'भाषा दूत' एवं 'भाषा रत्न सम्मान' से सम्मानित सभी मेधावी छात्रों एवं उन्हें तैयार करने वाले उनके भाषा शिक्षकों को बधाई दी। फिजी दूतावास के सलाहकार श्री रोनिल कुमार ने उपस्थित जन समूह को संबोधित करते हुए कहा कि मातृभाषा का सम्मान अपनी संस्कृति और सभ्यता का सम्मान है। मातृभाषा एक ऐसी कड़ी है जो व्यक्ति को अपनी मिट्टी से जोड़े रखती है। व्यक्ति के व्यक्तित्व निर्माण में मातृभाषा का योगदान अतुलनीय है।

मंचासीन अतिथियों द्वारा 10 वीं कक्षा की बोर्ड परीक्षा में हिन्दी एवं संस्कृत विषय में शत प्रतिशत अंक प्राप्त करने वाले 49 मेधावी छात्रों को 'भाषा रत्न सम्मान' से विभूषित किया गया, शेष छात्रों को जिन्होंने भारतीय भाषाओं (हिन्दी, संस्कृत, पंजाबी, बंगाली, उर्दू, गुजराती आदि) में 90 प्रतिशत से अधिक अंक प्राप्त किये थे उन्हें 'भाषा दूत सम्मान' से सम्मानित किया गया। सर्वाधिक प्रविष्टियाँ भेजने पर कुलाची हँसराज मॉडल स्कूल, अशोक विहार, दिल्ली को 'भाषा प्रहरी सम्मान' से सम्मानित किया गया। अपने-अपने विद्यालयों की वर्दी में आए हुए छात्रों की उपस्थिति ने कार्यक्रम की शोभा और गरिमा में चार चाँद लगा दिया । इस अवसर पर अकादमी द्वारा प्रकाशित त्रैमासिक पत्रिका 'हिन्दुस्तानी भाषा भारती' एवं अकादमी की अब तक की यात्रा को समेटे 'यात्रा अनवरत...' पुस्तिका का लोकार्पण भी किया गया।

केंद्रीय हिन्दी निदेशालय, वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग और इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र के पुस्तकों के स्टॉल सबके आकर्षण के केंद्र रहे। केंद्रीय हिन्दी निदेशालय की ओर से लगभग 2000 पुस्तकों का निशुल्क वितरण भी किया गया।

उपस्थित छात्रों, शिक्षकों, अभिभावकों एवं अतिथियों द्वारा खचाखच भरे हुए समारोह में हर्ष और गर्व का वातावरण था।

मेधावी छात्र एवं शिक्षक सम्मान समारोह-2019 के कुछ चित्र

विशेष रिपोर्ट

'भाषा गौरव शिक्षक सम्मान' एवं परिचर्चा : 'हिंगलिश और हिन्दी का भविष्य' का आयोजन सम्पन्न

विश्व पुस्तक मेले में 'भाषा गौरव शिक्षक सम्मान' एवं परिचर्चा: 'हिंगलिश और हिन्दी का भविष्य' का आयोजन सम्पन्न।

हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी द्वारा गुरुग्राम (हरियाणा) के लगभग 70 भाषा शिक्षकों के सम्मान में 'भाषा गौरव शिक्षक सम्मान समारोह' एवं 'हिंगलिश और हिन्दी का भविष्य' विषयक परिचर्चा का आयोजन रविवार, 5 जनवरी 2020 को विश्व पुस्तक मेला, प्रगति मैदान के सेमिनार हॉल में किया गया। सामूहिक राष्ट्रगान के बाद समारोह का विधिवत रूप से शुभारंभ हुआ। समारोह की मुख्य अतिथि प्रो. रमा शर्मा, प्राचार्या, हँसराज महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय थीं। अन्य मंचासीन अतिथियों में प्रो. अवनीश कुमार अध्यक्ष, वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग, प्रेस क्लब ऑफ इंडिया के उपाध्यक्ष श्री दिनेश तिवारी, प्रवासी संसार पत्रिका के संपादक डॉ. राकेश पाण्डेय, नॉर्वे से प्रकाशित होने वाली हिन्दी पत्रिका दर्पण के संपादक शरद आलोक तथा हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी के अध्यक्ष श्री सुधाकर पाठक थे। कार्यक्रम का संचालन अकादमी की सलाहकार सुश्री सुरेखा शर्मा एवं सुश्री सरोज शर्मा ने किया ।

सामान्यतया भाषा की जो समस्या है वो आम जनमानस तक पहुँच ही नहीं पाती। आम जन समुदाय भाषा जैसे संवेदनशील विषय पर इतना गंभीर भी नहीं है क्योंकि उनकी आधारभूत आवश्यकता के भीतर रोजी-रोटी प्राथमिकता के साथ आगे आती है। किन्तु वे यह भूल जाते हैं कि उनकी रोजी-रोटी की जो भाषा है वह धीरे-धीरे उनकी जुबानों से ही विस्थापित होकर अन्य भाषा के रूप में रूपांतरित हो रही है। उनकी रोजी-रोटी की भाषा उनसे छीनी जा रही है। उनकी भाषा के मूल को विकृत किया जा रहा है फिर भी वह इन सबसे अनभिज्ञ है। एक सामाजिक और भाषाई संस्था होने के नाते अकादमी की यह जिम्मेदारी बनती है कि वह समाज के विद्वत जनों, साहित्यकारों, पत्रकारों, शिक्षाविदों, भाषाविदों एवं शिक्षकों को एक ही मंच पर लाकर इस विषय को विमर्श में लाये। यही इस परिचर्चा का उद्देश्य है । क्या युवाओं में बढ़ते हिंगलिश के प्रचलन से भविष्य की हिन्दी का स्वरूप निर्धारित किया जा सकता है ? हिंगलिश से हिन्दी की मौलिकता को कितना संकट है ? ऐसे विचारणीय प्रश्नों को सम्बोधित करते हुए मंचासीन अतिथियों ने अपने-अपने वक्तव्य प्रस्तुत किए।

विजय कुमार शर्मा

भाषा के संवर्धन और संरक्षण के विषय में बोलते हुए अकादमी के अध्यक्ष श्री सुधाकर पाठक जी ने कहा कि भाषा की नई पौध जहाँ तैयार होती है हमें उन तक पहुँचने की आवश्यकता है। वास्तव में यदि हम भाषा की चिंता करते हैं तो हमें जमीनी स्तर पर जाकर उन नए पौधों को सींचना होगा। केवल हिन्दी पखवाड़ा, विश्व हिन्दी सम्मेलनों, भाषणों, किताबी प्रचार-प्रसार से भाषा का हित नहीं होने वाला। हिन्दी का भविष्य यदि कहीं सुरक्षित है तो वो विभिन्न विद्यालयों में पढ़ने वाले विद्यार्थियों एवं उनके भाषा शिक्षकों के हाथों में सुरक्षित है। हमें इन छात्रों एवं उनके भाषा शिक्षकों का मनोबल बढ़ाना होगा और उनके समर्पण को सम्मान देना होगा। प्रेस क्लब ऑफ इंडिया के उपाध्यक्ष, श्री दिनेश तिवारी जी ने सामाजिक दिनचर्या में भाषा की स्थिति पर चिंता व्यक्त करते हुए कहा कि धीरे-धीरे हमारे दैनिक क्रियाकलापों की भाषा से आम बोलचाल के सरल और सहजता से उपलब्ध शब्दों की जगह लोग अंग्रेजी के शब्दों का उपयोग करने लगे हैं जो कि भाषा और इसके शब्द भंडार के लिए खतरा है। अक्सर आप लोगों को यह कहते हुए सुनते होंगे कि गाड़ी पीछे बैक करो। बैक और पीछे शब्द का अर्थ एक ही है किन्तु शब्दों का उपयोग कहाँ, कैसे करना है लोग यहाँ आकर चूक जाते हैं । उनका कहना था कि जब हमारे पास सामान्य और सहजता से उपलब्ध हिन्दी के अपने शब्द हैं तो वहाँ केवल अपनी विद्वता दिखाने के लिए अंग्रेजी के शब्दों का उपयोग करना खोखली बुद्धिमानी है । आज कुछ शब्द विलुप्त होंगे कल कुछ वाक्य विलुप्त होंगे, फिर इस तरह भाषा के विलुप्त होने का खतरा और भी बढ़ जाएगा। समय रहते ही

हमें अपनी भाषा के संरक्षण के लिए पहल करनी होगी । अकादमी के भाषायी पहल की सराहना करते हुए उन्होंने अपनी शुभकामनाएं प्रेषित भी की। मुख्य अतिथि प्रो. रमा शर्मा जी ने युवाओं की भाषा समस्या पर चिंता व्यक्त करते हुए कहा कि अंग्रेजी को मान-प्रतिष्ठा के साथ जोड़ने से आज के बच्चे ना तो अच्छी अंग्रेजी बोल पा रहें हैं और ना ही अच्छी हिन्दी जब खाना-पीना, रहन-सहन, आचार-विचार और भाषा व्यवहार सब दिखावे के लिए किया जा रहा हो तो देश की संस्कृति एवं भाषा सम्पदा पर प्रश्न चिह्न लगना स्वभाविक है।

हिन्दी का व्याकरण एवं रचना संसार इतना समृद्ध है जिससे हम यह मान सकते हैं कि हिन्दी का भविष्य उज्ज्वल है। अपनी भाषा को लेकर हमें किसी भी तरह की कुंठा नहीं पालनी चाहिए। परिचर्चा के बाद अतिथियों द्वारा गुरुग्राम के भाषा शिक्षकों को 'भाषा गौरव शिक्षक सम्मान' से सम्मानित किया गया। सम्मान स्वरूप उपस्थित सभी शिक्षकों को सम्मान पत्र एवं स्मृति चिह्न भेंट किए गए। ज्ञात हो कि 'हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी' द्वारा अपनी वार्षिक सम्मान योजना के अंतर्गत शनिवार, 7 सितम्बर 2019 को 'स्कॉटिश हाई इंटरनेशनल स्कूल' के सभागार में गुरुग्राम (हरियाणा) के 30 विद्यालयों के 870 मेधावी छात्रों को सम्मानित किया गया था । हिन्दी विषय में शत प्रतिशत अंक प्राप्त करने वाले 31 मेधावी छात्रों को 'भाषा रत्न सम्मान', 90 प्रतिशत से अधिक अंक प्राप्त करने वाले मेधावी छात्रों को 'भाषा दूत सम्मान' तथा सर्वाधिक प्रविष्टियाँ भेजने पर डी.पी. एस.जी. स्कूल, गुरुग्राम को 'भाषा प्रहरी सम्मान' से सम्मानित किया गया था । 'भाषा गौरव शिक्षक सम्मान', मेधावी छात्र सम्मान की ही दूसरी कड़ी है । इस अवसर पर हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी के वरिष्ठ पदाधिकारी श्री भूपिंदर सेठी को अकादमी के प्रति दीर्घकालीन सेवाओं के लिए सम्मानित किया गया । अतिथियों एवं शिक्षकों की उपस्थिति से खचाखच भरा हुआ सभागार भव्य एवं आकर्षक था। समारोह में अन्य विशिष्ट अतिथियों के रूप में डॉ. मुक्ता, पूर्व निदेशक, हरियाणा साहित्य अकादमी, डॉ. धनेश द्विवेदी, डॉ. हरीश अरोड़ा, सुश्री कृष्णा जेमिनी, उर्मिला मिश्रा, लाडो कटारिया उपस्थित थीं। इस अवसर पर सर्वश्री विजय शर्मा, राजकुमार श्रेष्ठ, पुलकित खन्ना, भूपिंदर सेठी, श्रीमती सुरेखा शर्मा, श्रीमती सरोज शर्मा, श्रीमती सीमा सिंह, श्रीमती शकुंतला मित्तल, श्रीमती सुखवर्षा पाठक, डॉ. बीना राघव, श्रीमती राज वर्मा आदि विशेष रूप से उपस्थित थीं।

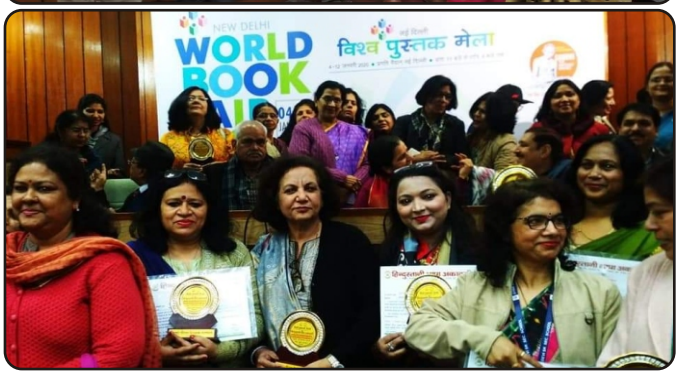

साक्षात्कार : डॉ. जीतराम भट्ट, सचिव, हिन्दी अकादमी, दिल्ली

आधुनिकता की दौड़ में संस्कृत, संस्कृत शिक्षा और संस्कृत शास्त्रों की अवहेलना हुई है।

डॉ. जीतराम भट्ट

बहुभाषी एवं बहुमुखी प्रतिभा के धनी डॉ. जीतराम भट्ट संस्कृत, हिन्दी और गढ़वाली के एक जाने-माने कवि, लेखक, गीतकार एवं विद्वत वक्ता हैं । आप दिल्ली सरकार की हिन्दी अकादमी, दिल्ली-संस्कृत अकादमी तथा नव गठित गढ़वाली, कुमाऊँनी व जौनसारी भाषा अकादमी जैसी अकादमियों के सचिव तथा प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, नई दिल्ली के निदेशक जैसे गरिमामय पद को सुशोभित कर रहे हैं । संस्कृत भाषा के प्रचार-प्रसार के लिए अथक श्रम करने वाले डॉ. भट्ट के विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में डेढ़ सौ से अधिक शोध लेख प्रकाशित हो चुके हैं तथा राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय संस्कृत व हिन्दी सम्मेलनों में शोध निबंध प्रस्तुत हो चुके हैं । संस्कृत भाषा को जन सामान्य की भाषा बनाने हेतु डी.डी. न्यूज से प्रसारित होने वाले'वार्तावली' कार्यक्रम के माध्यम से आप संस्कृत शिक्षा को बढ़ावा देने का कार्य कर रहें हैं । 'अनुभूतिशतकम्', 'वैचित्र्यम्', 'भक्तिवल्लरी', 'शतपथ ब्राह्मण एक अध्ययन', 'स्वयमेव संस्कृतशिक्षणम्', 'संस्कृत-शिक्षण-काव्यम्' 'संस्कृतवाग्व्यवहारः' आदि संस्कृत पुस्तकों के साथ-साथ आपकी हिन्दी और गढ़वाली भाषाओं में भी अनेक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। लोकमान्य तिलक गौरव, नवोदित संस्कृत कवि पुरस्कार, संस्कृत सेवा सम्मान, विद्वत् सम्मान, काशी विद्वत्परिषद् का सम्मान जैसे अनेक प्रतिष्ठित सम्मानों से आपको सम्मानित किया गया है ।

प्रश्न : सर्वप्रथम हिन्दुस्तानी भाषा भारती पत्रिका की ओर से आपका हार्दिक स्वागत है । आप एक कवि, गीतकार तथा लेखक होने के साथ-साथ दिल्ली सरकार की हिन्दी अकादमी, दिल्ली-संस्कृत अकादमी एवं नव गठित गढ़वाली, कुमाऊँनी व जौनसारी भाषा अकादमी के सचिव तथा प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान के निदेशक जैसे गरिमामय पदों पर सुशोभित हैं। कृपया यहाँ तक की अपनी यात्रानुभव के बारे में हमारे पाठकों को संक्षिप्त में कुछ बताएं ।

उत्तर : सर्वप्रथम मैं आपकी हिन्दुस्तानी भाषा भारती पत्रिका के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ कि कार्यालयीय व्यस्तता के कारण मेरे द्वारा संवाद हेतु प्रतीक्षा करवाने के बावजूद भी आपने बड़े आग्रह के साथ मुझे अपनी पत्रिका में स्थान दिया। मुझे आप जैसे समर्पित महानुभावों का सान्निध्य मिलता रहा है, जिसके कारण मैं चार-चार संस्थाओं का दायित्व संभालने के लायक बना हूँ । मेरी बाल्यावस्था को अपने गाँव की माटी की सुगन्ध मिली है, किशोरावस्था को गुरुकुल की अनुशासित शिक्षा तथा युवावस्था को दिल्ली जैसे महानगर की चुनौतियाँ मिली हैं। लोकप्रशासन, संस्कृत, हिन्दी विषय मेरी शिक्षा के विषय रहे हैं। अनेक वर्षों तक शिक्षा निदेशालय, दिल्ली में अध्यापन करने के पश्चात् मैं संस्कृत अकादमी, दिल्ली से जुड़ गया और फिर प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, हिन्दी अकादमी आदि संस्थाओं के साथ जुड़ने का सौभाग्य मिल गया और मेरे दायित्व का विस्तार हो गया।

प्रश्न : संस्कृत सभी भाषाओं की संजीवनी भाषा है किन्तु संविधान की आठवीं अनुसूची में सम्मिलित भाषा होने के बावजूद भी इसका अपना व्यापक प्रचार-प्रसार नहीं हो रहा है। आपके विचार में इसके क्या कारण हो सकते हैं ?

उत्तर : जी, आपने सत्य कहा कि जैसा प्रचार-प्रसार संस्कृत का होना चाहिए था, वैसा हुआ नहीं। इसके अनेक कारण हैं। पहला भारत में जो इतने वर्षों की गुलामी रही है वह बड़ा कारण है। पहले तो भारत बार-बार विदेशियों के आक्रमणों से जूझता रहा, बाद में मैकाले की शिक्षा पद्धति ने भारतीयों के मन में इस तरह के बीज डाल दिये कि वे अंग्रेजी और अंग्रेजियत के मोहजाल में फँसते चले गये। संस्कृत और संस्कृति उनको आधुनिकता में बाधा लगती रही है। दूसरा कारण यह है कि आजादी के बाद संस्कृत को आठवीं अनुसूची में शामिल करके कर्तव्य की इतिश्री मान ली गयी। जबकि संस्कृत का उपयोग उस समय पूरे भारत को जोड़ने वाली एक सम्पर्क भाषा के रूप में हो सकता था, किन्तु नहीं हुआ। तीसरा कारण यह है कि आधुनिक शिक्षा पद्धति में संस्कृत को केवल आठवीं तक के पाठ्यक्रम में संस्कृत पर ध्यान दिया गया और संस्कृत शास्त्रों की शिक्षा की अवहेलना की गयी। चौथा कारण यह है कि संस्कृत में स्थित ज्ञान-विज्ञान का प्रसार नहीं किया गया, जिससे लोग इसके प्रति आकर्षित होते।

प्रश्न : भारतीय शिक्षा नीति के संदर्भ में त्रिभाषा सूत्र को आप कैसे देखते हैं ? क्या त्रिभाषा सूत्र को लागू करने में कहीं कोई चूक हुई है ?

उत्तर : त्रिभाषा सूत्र का निर्णय राष्ट्रभाषा को केन्द्र में रख कर होना चाहिए था। वैज्ञानिक मानते हैं कि बाल्यावस्था में भाषा सीखने की क्षमता अधिक होती है। राष्ट्रभाषा को मद्देनजर रख कर यदि आठवीं कक्षा तक चार भाषा भी पढ़ानी पड़े तो छात्र पढ़ सकते हैं। भाषाएँ ज्ञान-विज्ञान के साथ-साथ संस्कृति और सभ्यता की प्रवाहिका होती हैं। अतः भाषा शिक्षण के लिए ठोस व्यवस्था होनी चाहिए। मेरा मानना है कि त्रिभाषा सूत्र जैसी व्यवस्था आजादी के तुरन्त बाद हो जानी चाहिए थी, किन्तु बहुत विलम्ब हुआ। जिसके कारण सभी भारतीय भाषाओं पर आज भी अंग्रेजी का साम्राज्य बरकरार है और भारत आज भी राष्ट्रभाषा के लिए जूझ रहा है।

प्रश्न : आज हर जगह बड़ी संख्या में अंग्रेजी माध्यमों के विद्यालयों की भरमार है यहाँ तक कि सरकारी विद्यालयों में भी प्राथमिक स्तर से ही अंग्रेजी को अनिवार्य विषय के रूप में पढ़ाया जाता है । विद्यालयी स्तर पर संस्कृत और हिन्दी को किन-किन समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है ?

उत्तर : जी, बिल्कुल सही कहा आपने कि पूरा भारतीय समाज अंग्रेजी पढ़ने-पढ़ाने में ही व्यस्त है। जैसा कि मैंने पहले भी कहा है कि मैकाले की शिक्षा नीति का असर पूरी तरह से अभी भी है, उसी का परिणाम है यह। आठवीं या दसवीं तक हिन्दी व संस्कृत की पढ़ाई होती तो है,किन्तु उस आत्मविश्वास के साथ नहीं, जिसके साथ अंग्रेजी या अन्य विदेशी भाषाओं की होती है। हिन्दी, संस्कृत ही नहीं,अपितु सभी भारतीय भाषाओं के साथ एक जैसी समस्या है।

प्रश्न : हाल ही में सचिव के रूप में दिल्ली-संस्कृत अकादमी में आपने चार वर्ष पूरे किए हैं। अकादमी की अब तक की गतिविधियों एवं आगामी योजनाओं को भी हमारे पाठकों से साझा करें ।

उत्तर : वैसे तो दिल्ली संस्कृत अकादमी में मुझे पच्चीस वर्ष हो गए हैं। मैं उपसचिव के रूप में दिल्ली संस्कृत अकादमी में आया था। 2015 से सचिव हूँ। क्योंकि पहले 20 वर्षों तक उपसचिव रहा, इसलिए जब सचिव बना तो कार्य की शैली और प्रणाली तो पूर्ववत् थी, केवल उत्तरदायित्व का खास अहसास मिला है। हाँ, कुछ गतिविधियों व योजनाओं को गति देने का प्रयास किया है। संस्कृत को आम जनता से जोड़ने के लिए नई कोशिशें की हैं। लोग संस्कृत को कठिन मान कर उसे पढ़ने से बचते रहे हैं। मेरा मानना है कि भाषा बोलने से ही आती है। इसलिए अकादमी के द्वारा हमने जन-सामान्य को संस्कृत में वार्तालाप करने के लिए प्रेरित करने के कार्यक्रम तैयार किये हैं और हम इसमें सफल भी हुए हैं। वर्तमान में अनेक लोग आपस में संस्कृत में बात करते हैं। लोकगीत और आधुनिक गीत-संगीत के माध्यम से नई पीढ़ी में संस्कृत के प्रति रुचि जागृत करने के प्रयास भी किये गये हैं।

प्रश्न : शास्त्रार्थ, व्याख्यान एवं वैदिक भाषा संस्कृत आज केवल पाण्डित्य, मंत्रोच्चारण एवं हिन्दू कर्म-कांडों की भाषा बनकर रह गई है । रोजगार से भी इसका सीधा संबंध न होने से युवा पीढ़ी इस प्राचीन भाषा से विमुख हो रही है । इस समस्या के निदान हेतु आपके विचार में क्या-क्या ठोस कदम अपनाए जाने चाहिए ?

उत्तर : इस तरह का प्रचार केवल परिस्थितिजन्य है। क्योंकि कुछ दुराग्रही लोग इसलिए संस्कृत को वर्ग, वर्ण और जाति से जोड़ते हैं ताकि संस्कृत आगे न आने पाये। उन्हें यह डर है कि जिस दिन संस्कृत आगे जाएगी, उनकी दुकानें खत्म हो जाएंगी । वस्तुतः कर्मकाण्ड व धर्म सम्बन्धी ज्ञान तो संस्कृत में केवल पाँच प्रतिशत ही है। बाकी तो संस्कृत में ज्ञान-विज्ञान और रोजगार के विषय ही हैं। आप भी जानते हैं कि योग, आयुर्वेद जैसे विषय इस समय पूरे विश्व में कितने लोकप्रिय हैं। क्यों लोकप्रिय हुए? क्योंकि सरकार ने ध्यान दिया और आयुष जैसा मन्त्रालय बनाया। जिससे इन दोनों विषयों को लोग समझे। इसी प्रकार से संस्कृत में स्थित ज्ञान-विज्ञान के लिए सरकारी स्तर पर प्रयास होने चाहिए। अध्यात्म, ज्योतिष, वास्तु, संगीत, नाटक, भाषाविज्ञान के अतिरिक्त भी संस्कृत शास्त्रों में अंक गणित, बीज गणित, रेखा गणित, वैदिक गणित, अर्थशास्त्र, मनोविज्ञान, खगोल विज्ञान, भूविज्ञान, जीवविज्ञान, वनस्पति विज्ञान, रसायन शास्त्र, जल विज्ञान जैसे अनेक विषय हैं, जिनसे रोजगार प्राप्त किया जा सकता है। जब पढ़ाई में शामिल ही नहीं किये जाएँगे तो छात्र पढ़ेंगे कैसे? आधुनिकता की दौड़ में संस्कृत, संस्कृत-शिक्षा और संस्कृत शास्त्रों की अवहेलना हुई है, जिससे लोगों में इस प्रकार का भ्रम बना हुआ है।

प्रश्न : आप संस्कृत भाषा के विद्वान होने के नाते संस्कृत के भविष्य को कैसे देखते हैं ?

उत्तर : हमारी ऐतिहासिक समृद्धि और सांस्कृतिक विशेषता के कारण विश्व के सभी देशों के लिए भारत कुतूहल का विषय रहा है। यह सब जानते ही हैं कि भारत की अस्मिता संस्कृत पर ही निर्भर है। हम बार-बार कहते हैं कि भारत सोने की चिड़िया रहा है, विश्वगुरु रहा है, 'जीरो दिया मेरे भारत ने'। जब हम पहले 'जीरो' दे सकते हैं तो अब क्यों नहीं? किन्तु इसके लिए हमें संस्कृत को सीखना होगा। संस्कृत शास्त्रों को पढ़ना होगा। संस्कृत शास्त्रों पर अनुसन्धान करना होगा। यह बात विदेशी समझ गये हैं। इसलिए उन्होंने अपने यहाँ संस्कृत की शिक्षा प्रारम्भ कर दी है। जर्मनी, ब्रिटेन

और अमेरिका में संस्कृत के प्राथमिक विद्यालय खोल दिये गये हैं। 'नासा' संस्कृत की पाण्डुलिपियों पर शोध कर रहा है। और जैसा कि भारतीयों का स्वभाव बन गया है कि जो चिन्तन पाश्चात्य देशों से लौट कर आता है, उसे हम शिर माथे पर लेते हैं। संस्कृत की खूबियाँ भी पाश्चात्य देशों से जब भारत में आने लगेंगी तो हम यहाँ फिर इसकी ओर बढ़ेंगे।

प्रश्न : कृपया साहित्यिक धरातल में संस्कृत साहित्य के पाठक वर्ग की स्थिति के बारे में बताएं । क्या आज के समय में भी संस्कृत भाषा की पुस्तकों का प्रकाशन हो रहा है ?

उत्तर : वर्तमान में संस्कृत का पाठक वर्ग बढ़ा है। इसमें कुछ अकादमी, आकाशवाणी, दूरदर्शन जैसी संस्थाओं की भूमिका है तो कुछ संस्कृत की विशेषता के कारण जन-सामान्य में जागृत संचेतना। संस्कृत अकादमी स्वयं नियमित रूप से एक मासिक पत्रिका और एक त्रैमासिक पत्रिका का प्रकाशन करती है, जो कि सदस्यों को भेजी जाती है। इसी प्रकार सौ से अधिक पत्र-पत्रिकाएँ संस्कृत में प्रकाशित हो रहे हैं। विविध विषयों पर अनेक ग्रन्थों का प्रकाशन भी हो रहा है। दिल्ली संस्कृत अकादमी भी दो सौ से अधिक पुस्तकें प्रकाशित कर चुकी है। अकादमी में अनेक जिज्ञासु आते हैं और पुस्तकें खरीद कर ले जाते हैं। विश्व पुस्तक मेले में भी संस्कृत अकादमी का बुक स्टॉल लगता है और अच्छी बिक्री होती है।

प्रश्न : भाषा, कला, साहित्य और संस्कृति को समर्पित दिल्ली सरकार के प्रतिष्ठित संस्थान हिन्दी अकादमी के साथ आप लंबे समय से जुड़े हुए हैं । हिन्दी भाषा और साहित्य की समृद्धि के लिए अकादमी की क्या-क्या आगामी कार्य योजनाएँ हैं ?

उत्तर : हिन्दी अकादमी में भी सचिव के रूप में मुझे चार वर्ष हो गये हैं। आप भी जानते हैं कि हिन्दी अकादमी अपने आप में अत्यधिक महत्त्वपूर्ण संस्था है। अकादमी को अनेक पूर्वापर साहित्यकारों का सान्निध्य मिला है। अकादमी ने अनेक स्मरणीय कार्य किये हैं। इसलिए अकादमी के साथ जुड़ कर मैंने इसके स्तर को बनाए रखने के लिए पूरी कोशिश की कि अकादमी की योजनाएँ जन-सामान्य तक पहुँचें। हिन्दी भाषा और साहित्य के प्रति लोक समुदाय की अभिरुचि पैदा हो इसके लिए दिल्ली के सुदूर क्षेत्रों में 'साहित्य संगोष्ठी', 'कहानी-पाठ', 'नुक्कड़ नाटक', 'गीत-गायन', 'नृत्य नाटिका', 'काव्य-गोष्ठी', 'हिन्दी-रचना-प्रतियोगिता' जैसी गतिविधियों का आयोजन प्रारम्भ किया। 'इन्द्रप्रस्थ भारती' पत्रिका को त्रैमासिकी से मासिक के रूप में प्रकाशित करना शुरू किया। युवा पीढ़ी में हिन्दी के प्रति रुचि जागृत करने के लिए 'नव स्वर','वसन्त उत्सव', 'साहित्य उत्सव', 'कविता बिम्ब', 'पावस पर्व' जैसे कार्यक्रमों को विस्तार दिया। ऐसी बहुत सारी अकादमी की योजनाएँ विगत अनेक वर्षों से जारी हैं। उनको नया रूप देने के लिए सेण्ट्रल पार्क, दिल्ली हाट, सुरताल संगम आदि नए क्षेत्रों में आयोजित करने की योजना बनायी। अकादमी कार्यालय का आधुनिकीकरण और अकादमी के हिन्दी प्रसार केन्द्रों को नवीन रूप देने का प्रयास किया। अभी भी प्रयास जारी हैं कि हिन्दी और साहित्य को आम जनता तक पहुँचाया जाए, जिससे राष्ट्रभाषा और राजभाषा के रूप में हिन्दी को सर्वजनहिताय की स्वीकृति मिल सके।

प्रश्न : आपके संज्ञान के लिए हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी के वार्षिक मेधावी छात्र सम्मान योजना के अंतर्गत हमें भारतीय भाषाओं के लगभग 3500 मेधावी छात्रों की प्रविष्टियां प्राप्त हुई हैं जिनमें संस्कृत के 330 और हिन्दी के 2800 छात्र भी सम्मिलित हैं । इनमें ऐसे 49 छात्र हैं जिन्होंने संस्कृत और हिन्दी विषय में शत प्रतिशत अंक प्राप्त किए हैं । छात्रों की इस उपलब्धि पर आपकी प्रतिक्रिया जानना चाहेंगे।

उत्तर : जी हाँ, मैं स्वयं हिन्दी और संस्कृत अकादमी के माध्यम से छात्रों और शिक्षकों को प्रोत्साहित करवाने के लिए कार्य करता हूँ । मैं हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी के इस विशिष्ट कार्य के महत्त्व को समझ सकता हूँ कि आपके इस प्रयास से छात्रों और शिक्षकों के अन्तर्मन में भारतीय भाषाओं और उनके साहित्य के प्रति जो गौरव आरूढ किया जा रहा है, उससे वे आजीवन अभिप्रेरित रहेंगे तथा भारतीय भाषाओं और साहित्य के प्रति समर्पित हो काम करेंगे। उनके माध्यम से यह संख्या द्विगुणित चतुर्गुणित हो कई गुणा आगे बढ़ेगी। इसके लिए मैं आपको हार्दिक बधाई देता हूँ । मैं भी हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी के शिक्षक सम्मान कार्यक्रम में उपस्थित रहा हूँ । इस गौरवपूर्ण समारोह की स्मृति मेरे जैसे अनेक सहृदयों के लिए हमेशा स्मरणीय रहेगी।

प्रश्न : आपने हमें अपना बहुमूल्य समय दिया इसके लिए हम आपका आभार व्यक्त करते हैं । अंत में आप पाठकों और युवा पीढ़ी को क्या संदेश देना चाहेंगे ?

उत्तर : इस संवाद के लिए मैं भी आपका आभारी हूँ । आपकी पत्रिका के माध्यम से मैं यही निवेदन करना चाहूँगा कि 'जो महत्त्व माँ और मातृभूमि का है, वही महत्त्व मातृभाषा और राष्ट्रभाषा का है। मातृभाषा और राष्ट्रभाषा हमें अपनी संस्कृति से जोड़ती हैं। मातृभाषा और राष्ट्रभाषा का साहित्य हमें आपस में एक दूसरे से जोड़ता है। इसलिए मैं सभी पाठकों और युवाओं से अनुरोध करता हूँ कि एक योग्य नागरिक और अच्छा मनुष्य बनना हो तो हिन्दी, संस्कृत जैसी भारतीय भाषाओं और उनके साहित्य से जरूर जुड़ें।

साक्षात्कार : ललित कुमार, लेखक, ब्लॉगर, कविता कोश के संस्थापक और विकलांगता अधिकार कार्यकर्त्ता

जीवन में सफलता के लिए लक्ष्य के प्रति ईमानदारी अति आवश्यक है।

ललित कुमार

जब व्यक्ति के पास मजबूत इच्छा शक्ति हो तब उसके सामने हर असंभव समझी जाने वाली चीजें गौण हो जाती है। सकारात्मक और ऊर्जावान विचार व्यक्ति को विषम परिस्थितियों में भी असामान्य से असाधारण बनाते है और इसका जीता-जागता उदाहरण है श्री ललित कुमार । ललित कुमार एक ऐसी शख्शियत हैं जिनका बचपन बहुत ही अभावों और संघर्षों में बीता । चार वर्ष की आयु में आप पोलियो से ग्रस्त रहें जिससे कमर से नीचे का हिस्सा पैरालाइज हो गया। आपने अपनी प्रारंभिक शिक्षा नगर निगम विद्यालय से पूरी की जहाँ कोई सुविधाएं उपलब्ध नहीं थीं । पोलियो के कारण आपके छह ऑपरेशन हुए और दो वर्षों तक बिस्तर पर रहना पड़ा। इन कठिन परिस्थितियों में आपने अपनी शिक्षा पूरी की और परिवार के इतिहास में पहले स्नातक बने । आपने उच्च शिक्षा एमएससी (बायो इंफोर्मेटिक). के) एमएससी (आई. टी) और स्नातक दिल्ली से प्राप्त की । आपने स्वर्ण पदक के साथ सॉफ्टवेयर इंजीनियरिंग में जी एन आई आई टी प्रोग्राम भी पूरा किया । आपको स्कॉटलैंड सरकार से स्कॉलरशिप भी प्राप्त हुई । आपने विभिन्न अंतरराष्ट्रीय संगठनों जैसे यूनाइटेड नेशन्स और मेडिकल रिसर्च काउंसिल के साथ काम भी किया। आज आप जिस स्थान पर हैं वो वास्तव में अकल्पनीय और असाधारण है। आप एक अच्छे मोटीवेशनल स्पीकर माने जाते हैं तथा विभिन्न स्कूल / कॉलेज / कॉरपोरेट / सरकारी संस्थाओं इत्यादि में विभिन्न विषयों पर वक्तव्य देने के लिए आमंत्रित किया जाता है। कविता कोश, गद्य कोश, दशमलव यू-ट्यूब चैनल, wecapable.com एवं Techwelkin.com वेबसाइट के संस्थापक निदेशक होने के साथ-साथ लेखन तथा तकनीकी ब्लॉगर के रूप अपनी महत्वपूर्ण पहचान स्थापित कर चुके हैं और आपके पाठकों की संख्या 20,00,00 से अधिक है। ये प्रोजेक्ट्स इंटरनेट पर हिन्दी व अन्य भारतीय भाषाओं की सबसे बड़ी लाइब्रेरी है जिसके 10,00,000 से अधिक पाठक हैं और प्रतिमाह 40,00,000 से अधिक रचनाएं इन प्रोजेक्ट्स पर पढ़ीं जातीं हैं। 'विटामिन जिन्दगी' आपकी पहली पुस्तक है जो सर्वाधिक लोकप्रिय पुस्तकों में से एक है। यह आपके जीवन संघर्षों पर आधारित प्रेरणादायी पुस्तक है। ललित जी विकलांगता के क्षेत्र में काम करने के लिए जाने जाते हैं। आपके काम और जीवन को अखबारों, रेडियो, टेलीविजन, पत्रिकाओं, वेबसाइटों और आयोजनों के जरिए रेखांकित किया जा चुका है। भारत के राष्ट्रपति द्वारा विकलांग जन के आदर्श के रूप में आपको राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित किया जा चुका है। वर्तमान समय मे आप राष्ट्रीय पुस्तक न्यास में कार्यरत हैं।

प्रश्न : हिन्दुस्तानी भाषा भारती पत्रिका की ओर से आपका हार्दिक स्वागत है। आपके जीवन की यात्रा बहुत कठिनाइयों भरी रही। जीवन के उस कठिन दौर के बारे में हमारे पाठकों को कुछ बताइये।

उत्तर : हिन्दुस्तानी भाषा भारती पत्रिका के पाठकों को मेरा नमन और इस साक्षात्कार का अवसर देने के लिए हार्दिक धन्यवाद। जी हाँ, मेरी जीवन यात्रा बहुत उतार-चढ़ाव भरी रही है। मेरा जन्म दिल्ली के एक गाँव में एक निम्न-मध्यम-वर्गीय परिवार में हुआ। मात्र चार वर्ष की आयु में ही मुझे पोलियो हो गया और कमर से नीचे का पूरा हिस्सा पैरालाइज हो गया। मेरे परिवार के इतिहास में शिक्षा का कोई विशेष स्थान नहीं था लेकिन फिर भी मेरे परिवारजन ने इस बात को सुनिश्चित किया कि पोलियो के बावजूद मेरी शिक्षा पूरी हो। मेरी स्कूली शिक्षा स्थानीय नगर निगम के स्कूलों में हुई। इन स्कूलों में सुविधाएँ बहुत कम थीं लेकिन मैंने अपनी पढ़ाई को रुकने नहीं दिया। मेरे सहपाठियों, अध्यापकों और स्कूल के बाहर के समाज का रवैया कोई बहुत अच्छा नहीं था। विकलांगता के कारण मुझे हर जगह दरकिनार कर दिया जाता था। सहपाठी मेरा, मेरी बैसाखियों का और मेरे शक्तिहीन पैरों का मजाक उड़ाते थे। अभी मुझे एक वाकया याद आ रहा है जिसका जिक्र मैंने अपनी किताब 'विटामिन जिन्दगी' में भी किया है। एक बार मेरी पूरी क्लास को स्कूल की तरफ से चिड़ियाघर घुमाने ले जाया जा रहा था। मैं बहुत खुश था क्यूंकि घर, हॉस्पिटल और स्कूल के अलावा आगे का मैंने और कुछ कभी देखा ही नहीं था। पूरे चाव से मैं उस दिन का इंतजार कर रहा था लेकिन मेरे मन के किसी कोने में डर भी था कि क्या हो अगर मास्टर साहब मुझे अन्य बच्चों के साथ चिड़ियाघर न ले जाएँ? जब चिड़ियाघर जाने वाला दिन आया, तो हुआ ठीक वही। मास्टर जी ने कहा, ललित, तुम रहने दो । ये शब्द मेरे बालमन को कितनी तकलीफ दे गए इस बात का अंदाजा मास्टर जी शायद ही लगा पाए होंगे। जब अन्य बच्चे स्कूल से चिड़ियाघर की ओर जा रहे थे -- तब मैं अपने मन को कचोट कर घर की ओर चल दिया था। इसी तरह के छोटे-बड़े न जाने कितने ही संघर्ष बार-बार मेरे मन और शरीर ने झेले। लेकिन हर बार मैंने खुद को केवल आगे की ओर बढ़ाया।

प्रश्न : प्रारंभिक शिक्षा की कठिनाइयों के बावजूद आपने विदेश से उच्च शिक्षा प्राप्त की। विदेशों की और भारत की शिक्षा नीति में आप क्या अंतर पाते हैं ? अपनी भाषा को लेकर वहाँ की सरकारें और जनता कितनी सजग है ?

उत्तर : मुझे बायोइन्फॉर्मेटिक्स विषय में परा-स्नातक की उपाधि हेतु पढ़ने के लिए स्कॉटलैंड की सरकार द्वारा एक पूर्ण स्कॉलरशिप दी

गई थी। इसी स्कॉलरशिप पर मैंने ऐडिनबर्ग में पढ़ाई की। फिर कनाडा की सरकार द्वारा मुझे पी.एच.डी. करने के लिए भी पूर्ण स्कॉलरशिप दी। मैंने देखा कि विदेशों में शिक्षा का उद्देश्य हमारे भीतर की रचनात्मकता को उजागर करना है। वहाँ शिक्षक, शिक्षा और परीक्षा पद्धति ऐसी है जो आपको कुछ नया करने के लिए प्रेरित भी करती है और कुछ नया करने के लिए सहायता भी देती है। भारत में अभी भी हमारी शिक्षा का आशय मात्र अच्छे अंक हासिल करने तक सीमित रह गया है। अच्छे अंक हासिल करना और अर्जित ज्ञान से नए ज्ञान का सृजन करना दोनों अलग-अलग बातें हैं। अच्छे अंक आप रट कर भी ला सकते हैं लेकिन शिक्षा का व्यवहारिक प्रयोग आप तभी कर पाएँगे जब आप उस ज्ञान को वास्तव में समझेंगे और अपनी रचना में उतारेंगे। ब्रिटेन एक अंग्रेजी भाषी देश है... जैसा कि हम सब जानते हैं कि अंग्रेजी एक वैश्विक भाषा है और दुनिया के हर कोने में इसका एक अलग रूप देखने को मिलता है। पी.एच.डी. की शुरुआत करने मैं कनाडा गया था और वहाँ मेरे विश्वविद्यालय की आधिकारिक भाषा फ्रेंच थी। फ्रेंच बोलने वाले लोग अपनी भाषा को लेकर बहुत सजग हैं और वे अपनी भाषा पर गर्व करते हैं। हालांकि हमारे देश में अपनी मातृभाषा के बनिस्बत अंग्रेजी बोलने को बड़ी बात माना जाता है लेकिन फ्रेंच बोलने वाले लोगों में यह भावना नहीं है। वे फ्रेंच को बड़े गौरव के साथ प्रयोग करते हैं।

असामान्य से असाधारण तक

प्रश्न : आपको कई महत्वपूर्ण अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं के साथ कार्य करने का अवसर मिला है। क्या हिन्दी भाषी होने से भाषाई समस्या का सामना करना पड़ा ? विश्व पटल पर हिन्दी को आप कैसे देखते हैं ?

उत्तर : मैंने संयुक्त राष्ट्र और मेडिकल रिसर्च काउंसिल जैसी संस्थाओं के साथ काम किया है। अपनी पढ़ाई और कार्य के दौरान बीसियों देशों के लोगों के साथ मैंने काम किया है। इन लोगों के साथ मुझे कोई परेशानी पेश नहीं आई क्योंकि मैं अंग्रेजी भी बोल सकता हूँ। यदि आप सामने वाले की भाषा को नहीं जानते तो विचारों के आदान-प्रदान में बहुत दिक्कत होती है लेकिन अंग्रेजी भाषा पूरे विश्व में एक पुल की तरह काम करती है जिसके जरिए एक व्यक्ति के विचार दूसरे व्यक्ति तक जा सकते हैं। अपने वैश्विक अनुभव से मैंने यह सीखा है कि हमारी भाषा की सीमा ही हमारी सीमा निर्धारित करती है। विश्व पटल पर अब हिन्दी एक सशक्त भाषा बन कर उभर रही है। सूचना प्रौद्योगिकी के प्रसार ने हिन्दी के वैश्विक विकास में बहुत सहायता की है। विदेशों में न केवल नए लोग हिन्दी सीख रहे हैं बल्कि हिन्दी भाषियों में भी अपनी भाषा को प्रयोग करने का उत्साह है।

प्रश्न : आप एक सफल तकनीकी ब्लॉगर हैं। इंटरनेट पर हिन्दी ब्लॉगिंग की क्या स्थिति है ? क्या हिन्दी के पाठकों की संख्या में वृद्धि हुई है ?

उत्तर : मेरा मानना है कि ब्लॉगिंग की दुनिया में हिन्दी को अभी बहुत कुछ करना बाकी है। वर्तमान स्थिति अच्छी नहीं है। अधिकांश हिन्दी ब्लॉगर अब फेसबुक इत्यादि पर लिखने लगे हैं। हिन्दी ब्लॉगरों की एक बड़ी समस्या यह रही है कि वे ब्लॉगिंग के तकनीकी पक्ष को नजरअंदाज कर देते हैं। ब्लॉगिंग भाषा और तकनीक दोनों पर आधारित विधा है। यदि आप ब्लॉगिंग में वास्तव में सफल होना चाहते हैं तो आपका तकनीक के प्रति जागरूक होना जरूरी है। हिन्दी ब्लॉगरों की एक और बड़ी समस्या दिशाहीनता रही है। वे यह तय नहीं कर पाते कि वे किस विषय पर ब्लॉगिंग कर सकते हैं या करना चाहते हैं। अमूमन लोग कविता, कहानी या समाचार लिखने तक ही सीमित देखे गए हैं। अन्य विषयो में हिन्दी ब्लॉगिंग बहुत कम होती है।

प्रश्न : बच्चों के सर्वांगीण विकास के लिए मातृभाषा में शिक्षा को सर्वोत्तम माध्यम माना गया है। आपके अनुसार भारत में मातृभाषा शिक्षा का प्रावधान क्यों नहीं लागू हो रहा है ?

उत्तर : मेरा भी यही मानना है कि मातृभाषा में शिक्षा से आप विषय को समझने पर पूरा ध्यान केन्द्रित कर पाते हैं। किसी अन्य भाषा में शिक्षा प्राप्ति इसलिए कठिन हो जाती है क्योंकि आपको विषय के अलावा नई भाषा से भी जूझना होता है। भारत में अंग्रेजी के प्रति मोह सबसे बड़ा कारण है कि मातृभाषा में शिक्षा की बात पीछे छूट जाती है। शैक्षिक व्यवस्था और बाजार के दबाव के चलते मातृभाषा में शिक्षा लेने या देने का जोखिम शिक्षार्थी या उनके माता-पिता नहीं उठाते।

प्रश्न : भारतीय शिक्षा नीति में त्रिभाषा सूत्र का प्रावधान है पर क्या भारत में इसे लागू करने में कहीं कोई चूक हुई है ?

उत्तर : भारत विविधताओं से भरा एक देश है। भारत में सैंकड़ों तरह की भाषाएँ और बोलियाँ प्रयोग की जाती है और हर भाषा को बोलने वाले लोग उस भाषा से वैसा ही जुड़ाव अनुभव करते हैं जैसा फ्रांसिसी लोग फ्रेंच से और हिन्दीभाषी प्रदेश के लोग हिन्दी से। ऐसे में त्रिभाषा सूत्र को लागू कर पाना आसान तो कभी नहीं था। मेरा मानना है कि त्रिभाषा सूत्र एक अच्छा सूत्र है और इससे भारतीय लोगों में न केवल एकजुटता बढ़ेगी बल्कि हमारी भाषा सम्बंधी योग्यताएँ भी उन्नत होंगी। उत्तर में किसी दक्षिण भारतीय भाषा को भी सिखाने का प्रावधान हो और दक्षिण में हिन्दी भी सिखाई जाए--

नई भाषा, कोई भी हो, सीखने में कोई नुकसान नहीं है। एकाधिक भाषाओं का ज्ञान होने से हमारे विश्व की सीमा को विस्तार मिलता है। भारतीय लोगों की अंग्रेजी सम्बंधी योग्यता को इसके उदाहरण स्वरूप लिया जा सकता है। भारत में अंग्रेजी को बहुत लोग जानते हैं लेकिन चीन में अंग्रेजी का उतना चलन नहीं है। यह एक बात भारत को सेवाओं के सेक्टर में चीन से कहीं अधिक आगे रखती है। हम जितनी अधिक अधिक भाषाएँ सीख सकें उतना ही अच्छा है।

प्रश्न : आज माध्यमिक स्तर के बाद अंग्रेजी को अनिवार्य विषय तथा हिन्दी को विदेशी भाषा फ्रेंच, जर्मन, स्पेनिश आदि के समकक्ष वैकल्पिक विषय के रूप में पढ़ाया जाना कितना उपयुक्त है ?

उत्तर : हिन्दी को वैकल्पिक भाषा बनाकर हम अपना बहुत नुकसान कर रहे हैं। यह एक ऐसा मसअला है जिसके परिणाम दूरगामी होंगे। निकट भविष्य को देखते हुए यदि हम बाजार के दबाव के चलते हिन्दी को त्याग कर किसी विदेशी भाषा को सीखेंगे तो यह कोई बुद्धिमानी भरा कदम नहीं होगा। आप हिन्दी पहले सीखिए... अपनी मातृभाषा पर पहले पकड़ बनाइये... उसके बाद जर्मन, स्पेनिश, रशियन, जापानी जो भाषा चाहें उसे भी जरूर सीखिए। यदि संभव हो तो विदेशी भाषाएँ जरूर सीखनी चाहिए लेकिन हिन्दी को गवाँ कर नहीं। भविष्य में हिन्दी एक वैश्विक भाषा बन सकती है, ऐसी स्थिति में लोग हिन्दी चाव से सीखना चाहेंगे। लेकिन जो लोग आज हिन्दी को छोड़ रहे हैं कल उनके लिए हिन्दी सीखना मुश्किल हो जाएगा। भाषा को जितना जल्द सीखा जा सके सीख लेना चाहिए। हिन्दी भाषी प्रदेशों में रहने वाले विद्यार्थियों के लिए हिन्दी सीखना और परीक्षा देकर अपने भाषा-ज्ञान का परिचय देना कोई मुश्किल काम नहीं है। जरूरत बस यह है कि हिन्दी के प्रति लोगों ने जो हीनभावना पाल रखी है उससे बाहर निकला जाए। यही हीनभावना हिन्दी को वैकल्पिक विषय के रूप में प्रस्तुत करवाती है।

प्रश्न : आप लेखन के क्षेत्र में भी सक्रिय हैं। आपकी पुस्तक 'विटामिन जिन्दगी' सर्वाधिक पढ़ी जाने वाली पुस्तकों में से एक है। हिन्दी साहित्यिक लेखन और पाठकों की अभिरुचि को लेकर आप क्या कहना चाहेंगे ?

उत्तर : लेखन तत्कालीन संस्कृति और समाज पर निर्भर करता है। आज सूचना की बहुलता और सुलभता का दौर है। लिखने में बहुत आसानी हो गई है । कम्प्यूटर पर कट-कॉपी-पेस्ट-टाइपिंग जैसे काम बहुत आसानी से किए जा सकते हैं। इसी तरह लिखित सामग्री को पाठक तक पहुँचाने के भी अनगिनत नए मार्ग खुल गए हैं। इन सारी सुविधाओं के कारण लेखकों की बाढ़-सी आ गई है। यह एक अच्छी बात है कि तकनीक हर किसी को अपनी बात कह सकने का मौका दे रही है लेकिन इस बहुलता और सुलभता ने लेखन और पठन की गुणवत्ता को प्रभावित भी किया है। किसी चीज को पढ़ने के लिए पाठक के पास समय कम है क्योंकि उसे और पचास पोस्ट पढ़नी है, बीस वीडियो देखने हैं, लोगों से चैट करनी है, टिप्पणियाँ करनी हैं, पोस्ट करनी है... इसलिए शायद पाठक 'क्विक रीड' सामग्री को तरजीह देने लगा है। और लेखक भी पाठक के मूड को देखते हुए उसी तरह के लेखन पर ध्यान दे रहे हैं। हालांकि ऐसा भी नहीं है कि गंभीर लेखन या पठन पूरी तरह से बंद हो चुका है। 'विटामिन जिन्दगी' में मेरी स्वयं की जीवनी है। हालांकि यह मेरा संस्मरण है, इसमें मेरे जीवन की घटनाएँ हैं, लेकिन मैंने इसे मन की सकारात्मक भावनाओं को केन्द्र में रखते हुए लिखा है। मन की इन सकारात्मक भावनाओं, जैसे कि आशा, प्रेरणा, साहस, विश्वास, को मैं 'मनविटामिन' कहता हूँ- क्योंकि ये हमारे मन को उसी तरह स्वस्थ रखती हैं जिस तरह विटामिन A,B,C,D इत्यादि हमारे शरीर को स्वस्थ रखते हैं। 'विटामिन जिन्दगी' एक कैप्स्यूल की तरह है जिसमें पाठक को ये सभी मन विटामिन भरपूर मिलते हैं। आजकल 'मन विटामिनों' की कमी तो लगभग हर इंसान में है। हमने जिन्दगी को एक ऐसी दौड़ और होड़ बना लिया है जिसका कोई विशेष लक्ष्य किसी को समझ में नहीं आता। बाजारवाद, प्रकृति से दुराव और इंसानी रिश्तों का दरकना, ये सब मनविटामिनों के कम होने की वजहें भी हैं और प्रभाव भी हैं। असंख्य लोग जीवन को केवल ढो रहे हैं । हर कोई चाहता है कि वह प्रसन्न रहे, उसका जीवन सफल रहे, उसके जीवन में कोई अर्थ हो लेकिन यह सब होगा कैसे, इसका किसी को पता नहीं। 'विटामिन जिन्दगी' से आप न केवल कई तरह के मनविटामिन ले सकते हैं बल्कि जीवन में लक्ष्य और अर्थ की खोज करने के भी बहुत से रास्ते आपको इस

पुस्तक से मिल सकते हैं। यह पुस्तक आपको बेहतर तरीके से जीवन जीने के लिए प्रेरित कर सकती है लेकिन उस दिशा में आगे आपको ही बढ़ना होगा।

प्रश्न : आपको विकलांग जनों के रोल मॉडल के रूप में राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित किया गया है। इस असाधरण उपलब्धि के बारे में कुछ ऐसे अनुभव हैं जो आप पाठकों से साझा करना चाहेंगे ?

उत्तर : वर्ष 2017 से मैंने विकलांगता अधिकार और विकलांगता के बारे में समाज को जागरूक करने के लिए काम करना शुरु किया। जब आप कोई प्रयास करते हैं और उस प्रयास को सराहा जाता है तो यकीनन आपको और बेहतर करने का प्रोत्साहन मिलता है। पोलियो के साथ मेरा जीवन बहुत मुश्किलों में रहा, समाज ने मुझे हमेशा असामान्य माना और मेरी जिद थी कि मुझे स्वयं को असाधारण सिद्ध करना है। जब मुझे राष्ट्रपति द्वारा रोल मॉडल का पुरस्कार मिल रहा था तो मैं मन ही मन सोच रहा था कि 'आज मैंने अपने असामान्य से असाधारण होने तक का सफर पूरा कर लिया ।' यह एक ऐसी सुखद अनुभूति थी जिसे मैं शब्दों में बयाँ नहीं कर सकता। एक राष्ट्रीय पुरस्कार का मिलना अपने आप में बहुत गौरव की बात है। लेकिन अगर वह पुरस्कार 'रोल मॉडल' का हो तो सम्मान के साथ एक जिम्मेदारी का भी बोध होता है। मैं चाहता हूँ कि जब तक जीवन रहे, मैं एक ऐसा जीवन जीऊँ जो समाज को बेहतर बनाए और अन्य लोगों को सकारात्मक रूप से प्रभावित करे।

प्रश्न : आपने हमें अपना बहुमूल्य समय दिया इसके लिए हम आपका आभार व्यक्त करते हैं। अंत मे आप पाठकों एवं युवा पीढ़ी को क्या संदेश देना चाहेंगे ?

उत्तर : एक अर्थपूर्ण चर्चा का अवसर देने के लिए आपका बहुत धन्यवाद। मैं पाठकों और विशेषकर युवा पीढ़ी से कहना चाहता हूँ कि आज के दौर में अपने लक्ष्य के प्रति ध्यान और धैर्य बनाये रखना पहले की तुलना में कहीं अधिक कठिन है। आप चाहें किसी भी क्षेत्र में सफलता पाने की इच्छा रखते हों, अपने लक्ष्य के प्रति ईमानदारी रखें। इस बात को कभी न भूलें कि अपने समाज, देश और दुनिया को बेहतर बनाने की जिम्मेदारी आपके ऊपर भी है। हर व्यक्ति को अपने जीवन में निस्वार्थ भाव से समाज के लिए कुछ न कुछ अवश्य करना चाहिए।

लोकोक्तियाँ

सरोज शर्मा

बचपन से हिन्दी में हम बहुत सी लोकोक्ति पढ़ते व सुनते आए हैं। जिसका अर्थ है लोक में प्रचलित वह कथन या उक्ति जो व्यापक लोक-अनुभव पर आधारित हो। लोकोक्ति में सामाजिक जीवन का अंश विद्यमान रहता है। लोकोक्ति में गागर में सागर जैसा भाव रहता है । हम इन्हें कहावतें भी कहते हैं। कुछ कहावतों का आनन्द लिया जाए संस्कृत में-

1. आमुखापाति कल्याणं कार्यसिद्धि हि शंसति,
   (होनहार बिरवान के होत चिकने पात)
2. नि:सारस्य पदार्थस्य प्रायेणाडम्बरो महान
   (ऊँची दुकान फीका पकवान)
3. अर्धो घटो घौषमुपैति नूनम।
   (थोथा चना बाजे घना)
4. यो यद्वपति बीजं हि लभते सो अपि तत्फलम।
   (जैसा करोगे वैसा भरोगे)
5. बह्वारम्भे लघुक्रिया।
   (खोदा पहाड़ निकली चुहिया)
6. हिताहितं वीक्ष्यनिकाममाचरेत् ।
   (जितनी चादर देखो उतने पैर फैलाओ)
7. न हि सुखं दु:खैर्विना लभ्यते ।
   (सेवा बिन मेवा नही)
8. गुणी गुणं वेत्ति न वेत्ति निर्गुण: ।
   (हीरे की परख जौहरी ही जाने)
9. दूरत: पर्वता: रम्या: ।
   (दूर के ढोल सुहावने)
10. जल बिन्दुनिपातेन क्रमश: पूर्यते घट: ।
    (बूंद-बूंद से घट भरे)
11. एका क्रिया द्वयर्थकरी प्रसिद्धा ।
    (एक पंथ दो काज)
12. नवा वाणी मुखे मुखे ।
    (पाँचों अंगुलियां बराबर नहीं होती)
13. एकस्य हि विवादो अत्र दृश्यते नैव प्राणिन: ।
    (एक हाथ से ताली नहीं बजती)
14. गत: कालो न चायाति।
    (गया वक्त फिर हाथ नहीं आता)
15. अतिदर्पे हता लंका ।
    (घमंड का सिर नीचा)

संकलन -सरोज शर्मा
सलाहकार-हिन्दुस्तान भाषा अकादमी, दिल्ली

चमत्कार लोक भाषाओं का

संस्कृत भाषा की वर्तमान स्थिति एवं हिन्दी के बीच अन्तर्सम्बन्ध

संतोष बंसल

वर्तमान युग में भाषा में जितनी तेजी से बदलाव हुआ है, उसका मूल कारण 'ग्लोब्लाइजेशन' के साथ-साथ इंटरनेट के बढ़ते उपयोग से सोशल मीडिया का सम्पर्क है। सोशल मीडिया ने अभिव्यक्ति के नए आयाम प्रदान किये तो उसमें भाषा का एक नया रूप परिलक्षित होता है, जिसमें अंग्रेजी के शब्दों की भरमार के साथ, वर्तनी की शुद्धता भी कम है। दूसरे देखते-ही-देखते हिन्दी का तत्सम शब्दावली युक्त साहित्यिक स्वरूप गायब हो गया और अब भाषा का नया रूप लक्षित है, जिसमें युवा पीढ़ी द्वारा प्रयुक्त कहन और चलन की भाषा है। यह वह भाषा है जो सिनेमा, समाचार और विज्ञापन में इस्तेमाल होती है, जिसमें हिन्दुस्तानी अंग्रेजी लेखकों का बड़ा बाजार है। इनके साहित्य में युवा पीढ़ी की नयी सोच और जीवन के बदलते अर्थों का पटल है एवं जो रातों-रात ख्याति प्राप्त करते हैं। प्रसिद्ध लेखक और विचारक श्री प्रियदर्शन के अनुसार, दरअसल सही भाषा वही होती है जो अपने परिवेश से पैदा होती है। हिन्दी भाषी क्षेत्र का आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक बदलाव अब उसकी भाषा में भी झलक रहा है। युवा पीढ़ी के बहुत सारे लेखक हिन्दी की पुरानी परम्परा के मुकाबले अंग्रेजी लेखन से कहीं ज्यादा परिचित हैं। इसीलिए उनके लिए वह वैश्विक संवेदना कहीं ज्यादा सहज है जो हिन्दी के पुराने लेखकों में पहले कम दिखती थी। ऐसे में इस बदलाव को दृष्टि में रखते हुए हमें तथ्यों का आकलन करना होगा और हमारी प्राचीन संस्कृत और हिन्दी भाषा के साथ इस नयी हिन्दी का भी पर्यवेक्षण आधुनिक सन्दर्भों में क्रमानुसार करना होगा।

सबसे पहले हम संस्कृत को देखे तो यह विश्व की प्रथम भाषा है, जिसे देववाणी अथवा सुरभारती भी कहा जाता है। संस्कृत स्वयं विकसित भाषा नहीं, बल्कि संस्कारित भाषा भी है। इसीलिए इसका नाम संस्कृत है, जो सुस्पष्ट व्याकरण और वर्णमाला की वैज्ञानिकता के कारण सर्वश्रेष्ठ भी है। इसे संस्कारित करने वाले साधारण भाषाविद नहीं, बल्कि महर्षि पाणिनि, महर्षि कात्यायन और योग शास्त्र के प्रणेता महर्षि पतंजलि हैं। तीनों ने योग की क्रियाओं को भाषा में समाविष्ट किया है, यही इस भाषा का रहस्य है। क्योंकि संस्कृत वाक्यों को किसी भी क्रम में रखा जा सकता है, इससे अर्थ के अनर्थ होने की कम या कोई भी संभावना नहीं होती। चूँकि संस्कृत के व्याकरण की परम्परा अत्यंत प्राचीन है, इसीलिए संस्कृत भाषा को जानने के लिए व्याकरण की जानकारी जरूरी है। संस्कृत विश्व की सर्वाधिक पूर्ण एवं तर्कसम्मत भाषा है और संस्कृत का इतिहास बहुत पुराना है। सबसे प्राचीन संस्कृत ग्रन्थ 'ऋग्वेद' है, जो कम से कम ढाई हजार ईसा पूर्व की रचना है। वैसे संस्कृत भाषा पंद्रह सौ ईस्वी पूर्व से पाँच सौ ईस्वी पूर्व तक भारत की बोलचाल की भाषा थी, जिसका मानक रूप संस्कृत वाङ्मय में प्रयुक्त हुआ। इस प्रकार संस्कृत के भी दो रूप थे, जिसमें एक वैदिक संस्कृत है, दूसरी लौकिक संस्कृत है, जिसमें वाल्मीकि, व्यास, कालिदास, माघ आदि की रचनाएं हैं। संस्कृत का साहित्य अत्यंत प्राचीन, विशाल, विविधतापूर्ण है, जिसमें अध्यात्म, दर्शन, ज्ञान-विज्ञान और साहित्य का खजाना है। इसी कारण हिन्दू, बौद्ध, जैन आदि धर्मों के प्राचीन ग्रन्थ संस्कृत में ही हैं एवं हिन्दुओं के सभी पूजा-पाठ और धार्मिक संस्कार की भाषा संस्कृत ही है। यही कारण है कि वर्तमान समय में भी विवाह, संतान प्राप्ति या गृह प्रवेश के समय हवन और यज्ञ आदि में संस्कृत के मंत्रों का ही उच्चारण किया जाता है एवं किसी भी शुभ कार्य में वैदिक विधि-विधानों का ही समावेश रहता है। हमारे आम जीवन में भी चाहे वह शहरी व्यक्ति हो या कि ग्रामीण, उसकी निष्ठा और विश्वास अपने पारम्परिक आचार और विचार में ही है। उसमें गायत्री मंत्रोच्चारण हो या कि मृत्युंजय मन्त्र, वह बिना किसी व्यवधान के सबके बीच पढ़ा और बोला जाता है। उन्नीसवीं शताब्दी में स्वामी दयानन्द और स्वामी विवेकानंद ने अपने इन्हीं वैदिक सूत्रों को भारतीय जन मानस में पुनर्स्थापित किया। इसके साथ वैश्वीकरण तथा रोजगार के कारण विदेशों में बसे सारे भारतीय अपनी संस्कृति और सभ्यता का अनुसरण करते हुए मंदिरों का निर्माण करवा रहें है, जहाँ सभी देवी-देवताओं की पूजा पारम्परिक तरीके से संस्कृत मन्त्रों के साथ ही होती है। मैंने खुद अपने अमेरिका प्रवास के दौरान देखा कि कैलिफोर्निया की सिलिकॉन वैली में बने भारतीय मंदिरों में संस्कृत के प्रकांड पंडितों एवं विद्वानों की नियुक्ति की हुई है। ये पुजारी भारत के संस्कृत विश्वविद्यालयों से शिक्षित और वेदों के ज्ञाता हैं तथा उनका हिन्दी, अंग्रेजी और संस्कृत भाषा पर एक समान अधिकार है। इन पुजारियों मे न अपनी क्षेत्रीय भाषा का हठ है और न अपने किसी मत या पंथ का आग्रह । वे भारत के चारों कोणों- पूर्व-पश्चिम, उत्तर-दक्षिण के आचार्यों और गुरुओं को प्रतिष्ठित करते हुए उनकी मान्यताओं का आदर-सत्कार करते हैं। इस तरह संस्कृत भाषा ने भारत को तो एकता के सूत्र में बांधा ही हुआ है तथा पूरे विश्व में भी अपने मूल मन्त्र 'वसुधैव कुटुंबकम' की भावना को फैलाया।

अगर हम संस्कृत की वर्तमान स्थिति को देखे तो इसे रोजी-रोटी का माध्यम बना रोजगार से जोड़ने की अत्यंत आवश्यकता है। देश और विदेश में नवनिर्मित धार्मिक मंदिरों में संस्कृत के पंडितों की नियुक्ति इस दृष्टि से सुदृढ़ और प्रभावी है। जिनके शिक्षण के लिए हमारे देश में काशी के अतिरिक्त कई अन्य स्थानों पर भी संस्कृत महाविद्यालय हैं, जहाँ प्राचीन गुरुकुल की तरह वेदों और उपनिषदों से सम्बंधित पाठ्यक्रम हैं, लेकिन संस्कृत भाषा और साहित्य के पठन-पाठन को व्यक्ति विशेष की रूचि और इच्छा पर छोड़ देना चाहिए, जैसा कि अन्य क्षेत्र में है कि जिसकी दिलचस्पी जिसमें हो,वह वही करे। वैसे ज्ञान-विज्ञान के भण्डार संस्कृत वांग्मय के शोध और अनुसंधान के लिए विदेशी स्कॉलर भी संस्कृत भाषा का पठन-पाठन कर रहें हैं । इनमें से कुछ छात्रों ने संस्कृत में अध्ययन और शोध करके जर्मन तथा अन्य देशों में शिक्षण और साहित्य अनुवाद का बड़ा काम किया है । बहुत से विद्वान अनुवाद के माध्यम से ही संस्कृत में लिखित वेदों के ज्ञान का प्रचार-प्रसार कर रहें हैं। कालिदास रचित नाटक 'अभिज्ञान शाकुंतलम' का विश्व की कई भाषाओं में अनुवाद हो चुका है और हमारे आदि ग्रन्थ 'रामायण' और प्राचीन आख्यान 'महाभारत' की कथायें और गाथाएं भारत से बाहर बहुत देशों में अनुवादित हो चुकी हैं। इस प्रकार संस्कृत भाषा ने हमारी प्रतिष्ठा को विश्व जगत के सम्मुख पुनः प्रतिष्ठित किया है और अब तो संस्कृत को कंप्यूटर के लिए सबसे उपयुक्त भाषा माना गया है (कृत्रिम बुद्धि के लिए) तथा वैज्ञानिक शोध से यह भी साबित हो गया है कि संस्कृत पढ़ने से मनुष्य की स्मरण शक्ति बढ़ती है। संस्कृत और हिन्दी के अंतरसम्बन्ध से पूर्व हम अन्य भाषाओं से इसके सम्बन्ध की जांच करे तो देखेंगे कि संस्कृत कई भारतीय भाषाओं की जननी है। जिनमें हिन्दी के साथ बांग्ला, मराठी, सिंधी, पंजाबी, नेपाली आदि आधुनिक भारतीय भाषाएँ इसी से उत्पन्न हुई हैं। इस प्रकार हम संस्कृत को 'माँ' का दर्जा देते हुए उपरोक्त भाषाओं को इसकी संतानों की सूची में शामिल कर सकते हैं। जिससे सबके रूप-स्वरूप भिन्न होते हुए भी रिश्ते में ये भाषाएँ एक ही परिवार की हैं। यही भारत की अनेकता में एकता का सूत्र है एवं देश की अखंडता का सूचक है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात हमारे संविधान निर्माताओं ने भारत के संविधान की आठवीं अनुसूची में संस्कृत को भी सम्मिलित किया। डॉक्टर भीमराव अम्बेडकर का भी मानना था कि संस्कृत पूरे भारत की भाषाई एकता के सूत्र में बाँध सकने वाली इकलौती भाषा हो सकती है और उन्होंने इसे देश की आधिकारिक भाषा बनाने का सुझाव दिया था, लेकिन भारतीय संविधान की धारा 343, धारा 348 (2) तथा 351 का सारांश यह है कि देवनागरी लिपि में लिखी और मूलतः संस्कृत से अपनी पारिभाषिक शब्दावली को लेने वाली हिन्दी राजभाषा है। इस प्रकार भारत के त्रिभाषा सूत्र के अंतर्गत संस्कृत को लिया गया तथापि यह उत्तराखंड राज्य की द्वितीय राजभाषा है। इसके अतिरिक्त आकाशवाणी और दूरदर्शन से संस्कृत भाषा में भी समाचार प्रसारित लिए जाते हैं और डी.डी न्यूज द्वारा 'वार्तावली' नामक संस्कृत कार्यक्रम भी प्रसारित होता है। विज्ञान और मीडिया के विस्तार के अनुक्रमांक के साथ भारतीय भाषाओं की तकनीकी शब्दावली भी संस्कृत से ही उत्पन्न की जाती है। निष्कर्ष में संस्कृत सभी भाषाओं की मूल स्रोत है, इसीलिए इनकी अधिकांश शब्दावली या तो संस्कृत से ली गयी है या संस्कृत से प्रभावित है।

अगर हम 'भाषा बहता नीर' इस उक्ति के अनुसार हिन्दी के उद्गम की बात करें तो हिन्दी जिस भाषा धारा के विशिष्ट दैशिक और कालिक रूप का नाम है, भारत में उसका प्राचीनतम रूप संस्कृत है। संस्कृत बोलचाल की भाषा विकसित होते हुए पहली ईस्वीं तक काफी बदल गयी, जिसे 'पाली' की संज्ञा दी गयी और बौद्ध ग्रंथों में इसका जो शिष्ट रूप मिलता है, वह पांचवी सदी तक आते आते 'प्राकृत' नाम से अभिहित किया जाने लगा । इसी प्राकृत से विभिन्न क्षेत्रीय अपभ्रंशों का विकास हुआ, जिसका काल पांच सौ से एक हजार ईस्वीं तक है। अंततः हिन्दी भाषा का उद्भव अपभ्रंश के शौरसैनी रूप से हुआ, जिसे मानक हिन्दी के नाम से भी पुकारा जाता है । यह भारत की राजभाषा है तथा हिन्दी प्रदेशों की सरकारी भाषा भी है तथा शिक्षा का माध्यम भी है तो समाचार-पत्रों और फिल्मों में भी इसका प्रयोग होता है। वास्तव में हिन्दी शब्द का सम्बन्ध संस्कृत शब्द 'सिन्धु' से माना जाता है। यह सिन्धु शब्द ईरानी में जाकर हिन्दू और फिर हिन्द हो गया। इसी में ईरानी का 'ईक' प्रत्यय लगने से 'हिन्दीक' बना, जिसका अर्थ यही 'हिन्द का' यूनानीन शब्द 'इंडिका' या अंग्रेजी शब्द 'इंडिया' आदि इस हिन्दीक के ही विकसित रूप हैं। 'हिन्दी' भी 'हिन्दीक' का ही परिवर्तित रूप है और इसका मूल अर्थ है 'हिन्द का'। इस प्रकार यह विशेषण है, किन्तु भाषा के अर्थ में संज्ञा हो गया है। हिन्दी भाषा के लिए इस शब्द का प्राचीनतम प्रयोग शरफुद्दीन यज्दी के 'जफरनामा' (1424) में मिलता है। (हिन्दी साहित्य का इतिहास पुस्तक में- डॉक्टर भोला नाथ तिवारी -भूमिका-२ हिन्दी भाषा : उद्भव, विकास और स्वरुप)

इस प्रकार हिन्दी साहित्य के आरम्भ का प्रश्न हिन्दी भाषा के आरम्भ से जुड़ा है। यद्यपि अपभ्रंश अपने मूल रूप में पंद्रहवीं शताब्दी तक साहित्य की भाषा बनी रही, तथापि आठवीं शताब्दी से ही बोलचाल की भाषा पृथक होकर उसके समानांतर साहित्य-रचना का माध्यम बन गयी थी। इसी भाषा को कुछ विद्वानों ने उत्तर अपभ्रंश या पुरानी हिन्दी कहा है और कुछ विद्वानों ने 'अवहट्ठ' नाम दिया है, किन्तु चंद्रधर शर्मा गुलेरी ने स्पष्ट शब्दों में यह घोषणा

की थी कि 'उत्तर अपभ्रंश' ही पुरानी हिन्दी है। किन्तु हिन्दी भाषा और हिन्दी साहित्य के स्वरूप एवं विकास के समबन्ध में जिस दृष्टिकोण का परिचय विदेशी जर्मन विद्वान जॉर्ज ग्रियर्सन ने दिया है, वह परवर्ती इतिहासकारों के लिए भी पथ प्रदर्शक सिद्ध हुआ। सन् 1888 में एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल की पत्रिका के विशेषांक के रूप में रचित 'द मॉडर्न वर्नैक्युलर लिटरेचर ऑफ हिन्दुस्तान' का प्रकाशन हुआ, जो नाम से इतिहास न होते हुए भी सच्चे अर्थ में हिन्दी साहित्य का पहला इतिहास कहा जा सकता है। जिसमे जॉर्ज ग्रियर्सन ने हिन्दी साहित्य का भाषा की दृष्टि से काल विभाजन तथा क्षेत्र निर्धारण किया और अपनी भाषा नीति को स्पष्ट करते हुए भूमिका में लिखा है, मैं आधुनिक भाषा-साहित्य का ही विवरण प्रस्तुत करने जा रहा हूँ। अत: मैं संस्कृत में ग्रन्थ रचना करने वाले लेखकों का विवरण नहीं दे रहा हूँ। प्राकृत में लिखी पुस्तकों को भी विचार के बाहर रख रहा हूँ। भले ही प्राकृत कभी बोलचाल की भाषा रही हो, पर आधुनिक भाषा के अंतर्गत नहीं आती। मैं न तो अरबी-फारसी के भारतीय लेखकों का उल्लेख कर रहा हूँ और न ही विदेश से लाई गयी साहित्यिक उर्दू के लेखकों का ही। उद्धृत 'हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास'-हिन्दी अनुवाद-डॉक्टर किशोरीलाल गुप्त) सन्दर्भ ग्रन्थ-हिन्दी साहित्य का इतिहास-संपादक-डॉक्टर नगेंदर, डॉक्टर गणपतिचंद्र गुप्त द्वारा लिखित लेख-'पूर्वपीठिका' अध्याय ।

वैसे आचार्य रामचंद्र शुक्ल द्वारा रचित हिन्दी साहित्य का इतिहास भी मूलत: नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित 'हिन्दी-शब्द-सागर' की भूमिका के रूप में लिखा गया था, जिसे आगे स्वतंत्र पुस्तक का रूप दे दिया गया एवं बाद में इसे सर्वोच्च स्थान प्राप्त हुआ और इसी के परिप्रेक्ष्य में अगर हम आज संस्कृत और हिन्दी के अन्तर्सम्बन्धों की जांच करें, तो पटल एकदम साफ और स्पष्ट नजर आएगा और किसी विवाद की कोई गुंजाईश न होगी। यधपि संस्कृत समस्त भाषाओं की जननी और आधार पीठिका है, किन्तु हिन्दी भाषा का विकास एक जनभाषा के रूप में हुआ। डॉक्टर रामगोपाल शर्मा 'दिनेश' का मंतव्य है कि, कोई भी जन भाषा अपने प्रवाह की अक्षुण्णता में सदा एकरूप नहीं रह सकती। स्थान और काल के भेद से उसमे रूप-भेद भी स्वत: उत्पन्न हो जाता है, किन्तु जब तक उन रूपों की तात्विक समानता सुरक्षित रहती है तब तक वे एक ही भाषा का बोध कराते हैं। हिन्दी भाषा ने भी स्थान और काल के भेद से अपनी दीर्घ यात्रा में अनेक रूप धारण किये हैं।

मगही, मैथिली, भोजपुरी, अवधी, कन्नौजी, बघेलखंडी, बुंदेलखंडी, ब्रज, खड़ीबोली, बांगरू, मेवाती, हाड़ौती, मारवाड़ी, मेवाड़ी, ढूंढारी, मालवी, भीली, खानदेशी, पहाड़ी आदि उसके अनेक रूप-भेद पाए जाते हैं, किन्तु इन सबमे तात्विक समानता विद्यमान है । आजकल इन भाषा रूपों को स्थान भेद से स्मरण किया जाता है, किन्तु काल भेद से भी इन रूपों में अंतर है। (आदिकाल -हिन्दी साहित्य का इतिहास-सम्पादक-डॉक्टर नगेंदर) वास्तव में इस तथ्य के सन्दर्भ में भाषा के रूप भेद को भूलकर तात्विक परिवर्तन के आधार पर ही एक भाषा के अंत और दूसरी भाषा के आरम्भ का इतिहास स्वीकार करना अधिक समीचीन प्रतीत होता है।

यद्यपि इसमें कोई संदेह नहीं कि राजभाषा हिन्दी का स्वरूप संस्कृत पर आधारित है, किन्तु यह लोक भाषाओं, बोलियों, अपभ्रंश, प्राकृत और पालि जैसी भाषाओं का आधार लेकर खड़ी हुई है। एक विद्वान के कथनानुसार, भाषा के निर्माण में हमारी बोलियों ने अहम् योगदान दिया है। बोलियाँ न होती और इतनी प्रभावी न होती तो नानक के पदों में ब्रज का बोलबाला न होता। रसखान हिन्दी के बड़े कवि न कहलाते। जायसी और तुलसी जन जन में न छाये होते। सूरदास के पदों का लालित्य सर चढ़कर न बोलता। विद्यापति मैथिली में लिखने के बावजूद हिन्दी के सिरमौर कवि न कहलाते। अवधी, बुंदेलखंडी, ब्रज, मालवी, राजस्थानी, मैथिली, भोजपुरी ने आधुनिक हिन्दी को खड़ा किया है। केवल संस्कृत के बलबूते वह पूजा-पाठ के योग्य तो बन सकती थी, लिंगुआ फ्रैंका का दर्जा हासिल न कर पाती । ('भाषा की खादी' लेखक श्री ओम निश्छल, नया ज्ञानोदय पत्रिका, सितम्बर 2015 अंक) उपरोक्त कथन के उत्तर में यह कहना उचित होगा कि भाषाएँ और बोलियों को अपनाया जाता है, उन्हें थोपना अच्छा नहीं होता। हिन्दी भाषा में यह खूबी है कि वह समयानुसार बोलियों और अन्य भाषाओं के शब्द ग्रहण करती रही है, जिससे उसका शब्दकोष इतना व्यापक बन गया। इसके साथ ही भक्ति काल के बाद दरबार की रीति और नीति में सिमटी हिन्दी भाषा ने आधुनिक युग में कई रूप विकसित किये, जो अपने परिवेश और चरित्रों के हिसाब से स्वरूप अख्तियार करती है। एक ही समय में जयशंकर प्रसाद और मुंशी प्रेमचंद अलग-अलग हिन्दी लिखते हैं और दुस्साहसिक प्रयोगकर्ता महाप्राण निराला भी कविता और गद्य के लिए भिन्न भाषा चुनते हैं। वस्तुत: छायावाद साहित्य और भाषा की दृष्टि से वह स्वर्णकाल है, जिसमें हिन्दी में संस्कृत निष्ठ तत्सम शब्दावली का भरपूर इस्तेमाल हुआ। बाद में इस परिष्कृत और परिमार्जित हिन्दी भाषा ने तद्भव और देशज या लोक शब्दों का विस्तृत प्रयोग कर के प्रगति की ओर रुख किया। लेकिन अगर हम साहित्य के इतिहास में आधुनिक हिन्दी के संघर्ष की यात्रा देखें तो पाएंगे कि डेढ़ सौ सालों पूर्व कवि भारतेन्दु हरिश्चंद्र का वह दौर था, जब खड़ी बोली अपने पाँव और लिपि के सहारे खड़े होने की कोशिश कर रही थी। उसी वक्त देवनागरी लिपि की अनुमति के पीछे भी साठ हजार लोगों के दस्तखत और दरखास्त की दास्तान

है, जिसे कुछ व्यापारी लोगो के दस्ते के साथ पंडित मदन मोहन मालवीय जी ने लेफ्टिनेंट गवर्नर मैकडॉनेल को सौंपा। अपनी उदारता के लिए मशहूर सर अंथनी पैट्रिक मैकडॉनेल ने भी भाषा के प्रश्न पर जनता की भावनाओं का ध्यान रखते हुए स्थानीय नागरी लिपि की अनुमति दे दी। इस तरह खड़ी बोली के उद्‌गम और सर्वाधिक उपयोग वाले भूभाग में नागरी लिपि की मदद से आधुनिक और मानकीकृत हिन्दी के निर्माण की प्रक्रिया शुरू हुई, जिसने सौ वर्षों के अंदर ही विश्व की किसी भी भाषा के बरक्स खड़ा हो सकने में समर्थ गद्य और पद्य निर्मित कर लिया। (विभूति नारायण रॉय, लेख-'जहाँ शुरू हुई आधुनिक हिन्दी की यात्रा' हिन्दुस्तान अखबार 4 दिसंबर 2018) पिछले दिनों साहित्य अकादमी से प्रकाशित पुस्तक 'देवनागरी लिपि आंदोलन का इतिहास' में श्री राम निरंजन परिमलेंदु भारतीय समाज के संघर्ष के वे तत्व भी उद्धृत करते हैं, जिनके कारण दो लिपियों में लिखी जाने वाली खड़ी बोली हिन्दुओं और मुसलमानों में बँट गयी। फारसी लिपि में लिखे जाने पर उसे उर्दू और नागरी में लिखी को हिन्दी कहा गया। आगे राजा शिवप्रसाद 'सितारे-हिन्द' ने भी बोलचाल की भाषा नागरी में लिखने का आंदोलन चलाया और हिन्दी को हिन्दू बनाने वालों का विरोध सहा। यही नहीं, स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान गांधीजी ने इसी भाषा के लिए ट्रेनों में अंग्रेजों के कोड़े खाये लेकिन आजादी के बाद यही हिन्दी भाषा राजनीति की शिकार हो गयी। जिससे उसे आधिकारिक दर्जा हासिल न हुआ एवं अब भी दफ्तरों की नौकरियों में, प्रबंधन और प्रशासन में अंग्रेजी को वही रूतबा हासिल है जो ब्रिटिश राज में था। किन्तु धीरे-धीरे मीडिया और पत्रकारिता के बढ़ते कदमों से हिन्दी भाषा का निरंतर विस्तार होता जा रहा है। हालांकि इस सोशल मीडिया के संसार में संवेदना की जगह सूचना ने ले ली है, जिसमें 'स्माइलीज' और 'इमोटिकॉन्स' की दुनिया है और जिन के सहारे भाव व्यक्त किया जाते हैं। यह दुनिया आगे और भी फैलेगी, जिससे हिन्दी भाषा की चुनौतियां और बढ़ेंगी । इसके बावजूद भी अभिव्यक्ति के इस नए मंच के साथ हिन्दी भाषा में तेजी से लेखन बढ़ा है और उसके माध्यम से हिन्दी की पहुँच दूर-दूर तक हुई है। अब प्रत्येक वर्ष अनेक सरकारी और गैर सरकारी संस्थाएं दूसरे देशों में सम्मेलेन और आयोजन कर के हिन्दी का प्रचार-प्रसार कर रही हैं, साथ ही सरकार भी हिन्दी को सयुंक्त राष्ट्र की आधिकारिक भाषा बनाने के लिए प्रयासरत है। वैसे साहित्यकारों और अनुवादकर्त्ताओं के निरंतर प्रयास ने हिन्दी को समृद्ध करने के साथ उस मुकाम पर खड़ा कर दिया, जहाँ वह उन्मुक्त उड़ान भर रही है। इसमें बॉलीवुड की हिन्दी फिल्मों का भी महत्वपूर्ण योगदान है, जिसने अपनी कला और आकर्षण से पूरे देश में हिन्दी के प्रसार में जबरदस्त भूमिका अदा की। इसमें प्रवासी भारतीयों का पुण्य प्रताप भी है कि, 140 देशों में हिन्दी धड़ल्ले से इस्तेमाल होती है और यह एक अरब, 20 करोड़ से अधिक लोगों की समझ में आने वाली भाषा है। हिन्दी को महज आमजन की बोलचाल मानना भूल होगी, इसमें अनंत सम्भावनाएँ छिपी हैं। (शशि शेखर, लेख 'हिन्दी और भारत का अश्वमेध' हिन्दुस्तान अखबार 26 अगस्त 2018)

-सुश्री संतोष बंसल
ए-1/7, मियांवाली नगर,
पश्चिम विहार, दिल्ली-110087

कंप्यूटर के लिए अनुकूल है देवनागरी लिपि

हिन्दी भाषा का व्याकरण एवं इसकी लिपि (देवनागरी) का अपना वैज्ञानिक आधार है इसलिए देवनागरी लिपि कंप्यूटर तंत्र की प्रक्रिया के लिए पूर्ण रूप से अनुकूल है। देवनागरी लिपि को कंप्यूटेशनल भाषा में बदलने की अपार संभावनाएँ हैं तथा इसके माध्यम से विलुप्त होती अन्य भारतीय भाषाओं का भी संरक्षण संभव है। इस लिपि में विश्व की किसी भी भाषा एवं ध्वनि का लिप्याँकन आसानी से किया जा सकता है। देवनागरी में पर्याप्त वर्णों (52 वर्ण) की उपलब्धता है जो कि रोमन वर्णों (26 वर्ण) से संख्या में दोगुने हैं। देवनागरी में पर्याप्त वर्णों की उपलब्धता ही इसे श्रेष्ठ लिपि बनाती है। उदाहरण के लिए रोमन लिपि में हम हिन्दी के वर्ण 'ट' एवं 'त' के लिए 'ज' वर्ण, 'थ' एवं 'ठ' के लिए 'जी' वर्णों आदि का प्रयोग करते हैं; तो इस स्थिति में हम रोमन वर्ण 'ज' से देवनागरी वर्ण की सही ध्वनि 'ट' है या कि 'त' है, इसी प्रकार रोमन वर्णों 'जी' से देवनागरी वर्ण की सही ध्वनि 'थ' है या कि 'ठ' है आदि के लिए प्राय: भ्रम की स्थिति में रहते हैं। परंतु इस प्रकार के भ्रम की कोई भी गुंजाइश देवनागरी लिपि के प्रयोग में नहीं है। इसलिए यह लिपि अन्य सभी लिपियों से अधिक वैज्ञानिक एवं श्रेष्ठ है । यह विश्व लिपि के रूप में भी स्थापित होने की अपनी क्षमता रखती है।

राष्ट्रभाषा या राजभाषा के लिए
हम भीख नहीं मांगते,
यह हमारे जनतंत्री अधिकार
और संविधान का आदेश है।
-नन्ददुलारे बाजपेयी

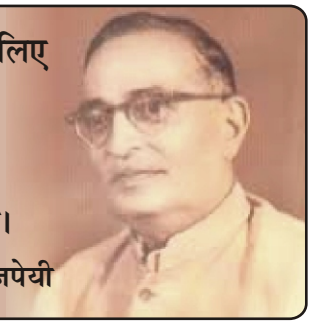

चमत्कार लोक भाषाओं का

संस्कृत भाषा का वैश्विक परिदृश्य

डॉ. दिग्विजय कुमार शर्मा

संस्कृत सभी भाषाओं की जननी मानी गई है। इतना ही नहीं यह भाषा संसार की समस्त परिष्कृत भाषाओं से भी प्राचीनतम है। इसकी महत्ता का कारण न केवल विशिष्टता बल्कि यह संसार की सभी भाषाओं में वैदिक तथा अन्य साहित्य के कारण इसकी श्रेष्ठता सभी ने स्वीकार की है। सम्+कृ+क्त= संस्कृत अर्थात 'सम्' उपसर्ग युक्त 'कृ' धातु में 'क्त्' प्रत्यय के योग से संस्कृत शब्द बना है। संस्कृत का अर्थ है- संस्कार किया हुआ या परमार्जित या परिष्कृत । इस दृष्टि से प्रत्येक भाषा संस्कृत ही होती है। क्योंकि बोलचाल की भाषा का परिष्कार या संस्कार करके ही भाषा का निर्माण होता है। अत: संस्कृत शब्द सच्चे ऋग्वेदादि की प्राचीनतम भाषा के लिए दिया गया शब्द ही समझना चाहिए। डॉ. अरुणा कुमारी बैस के अनुसार- "संस्कृत विश्व की सबसे प्राचीन और विशाल भाषा है। इसी के आधार पर हमारी प्राचीन संस्कृति और सभ्यता निर्भर है। संस्कृत ने न केवल एशिया महाद्वीप को अपितु विभिन्न देशों की भाषाओं और संस्कृतियों को भी प्रभावित किया है। यूरोप और अमेरिका खण्ड की भाषाओं और संस्कृतियों पर इसकी अमिट छाप है। भारत के सभी प्रांतीय भाषाओं की आदि जननी ही संस्कृत भाषा है।"1

धार्मिक भावनाओं के प्रति व्यक्तियों ने संस्कृत भाषा को देव वाणी अथवा सुरभारती जैसे नाम भी प्रदान किए हैं। यही वह भाषा है जिसके अंतर्गत हिंदू धर्म के समस्त शास्त्र निशिद्ध हैं और इसका उद्भव ऋषियों और देवताओं से माना गया है। संस्कृत भाषा का संबंध देवताओं से जोड़कर इसे देववाणी कहा गया है। इस भाषा से ही देवताओं की पूजा आराधना और उन्हें आह्वाहन करने के लिए मंत्र भी लिखे गये हैं, संस्कृत में लिखे हुए इन मंत्रों में अद्भुत और असीमित आधार शक्ति छिपी हुई है । हिन्दू धर्म में यह मान्यता प्रचलित रही है कि देवता लोग इसी भाषा को समझते और बोलते हैं। संस्कृत के प्रसिद्ध विद्वान आचार्य दण्डी ने अपने 'काव्यदर्श' में लिखा है-

संस्कृत नाम दैवी वागन्वाख्याता महर्षिभि:।
भाषासु मधुरा मुख्य दिव्या गीर्वाण भारती ॥

संसार में सर्वप्रथम ग्रंथ तथा हिंदू धर्म के सर्वस्व ऋग्वेदादि इसी गौरवमयी वाणी में महर्षियों द्वारा भगवान की आंतरिक प्रेरणा से निर्मित हुए थे। इसी भाषा में आध्यात्म की गंभीर गुत्थियों को सुलझाने वाले उपनिषदों का प्रणयन हुआ। सृष्टि के विकास क्रम एवं प्रलय का वर्णन करने वाले इतिहास, ग्रंथ, पुराण आदि का निर्माण भी इसी भाषा में हुआ। हमारे पूर्वज आचार्यों की उत्कृष्ट संस्कृति, रीति-रिवाज एवं परंपरा आदि का अवतरण भी इसी भाषा में हुआ है। इस प्रकार लौकिक अभ्युदय एवं पारलौकिक नि:श्रेयस सिद्धि के साधन जितने ज्ञान, विज्ञान, कर्मकाण्ड, शास्त्र, पुराण आदि हैं, वे इसी वाणी में अवतरित हुए हैं। इसलिए संस्कृत को देववाणी कहा जाता है। 'विद्धाँसो वै देवा:।' इस कथन से यह स्पष्ट होता है कि यह एक पुरातन भाषा है। इसके अनेक नाम हैं। प्राचीन काल से ही संस्कृत जनसामान्य की भाषा रही है। रामायण और महाभारत काल में यह जनसाधारण के दैनिक प्रयोग में आती थी, आज समय की करवट के नीचे दबी हुई यह भाषा अपनी ज्ञानगरिमा, विशिष्टता और समृद्ध साहित्य के कारण केवल विद्वानों के उपयोग की ही विषयवस्तु बनकर रह गई है। '''संस्कृत' (संज्ञा) जो सामान्य भारत की समग्र प्राचीन और धार्मिक भाषा के लिए प्रयुक्त है। अधिक उपयुक्तता के साथ ही उसी विभाग की है, जो स्वदेशी वैयाकरणों के परिश्रम से संस्थापित और व्यथित होकर, अधिकतम समान कालखंडों के अंतराल में यूरोप में लेटिन के समान ही, शिक्षित और पुरोहित जाति के लिखित-भाषित विनिमय-माध्यम के रूप में गत दो सहस्र वर्षों या अधिक से कृत्रिम जीवन जीती रही हैं तथा वर्तमान काल में भी वही कार्य कर रही है।"2

संस्कृत भाषा की उत्पत्ति के विभिन्न परिप्रेक्ष्य में विद्वानों के मत प्रचलित है, जैसे- वैदिक मत, गीता मत, उपनिषद्, वैयाकरणिक, भाषा वैज्ञानिक आदि मत विशिष्ट हैं। वैदिक मतानुसार- 'ऋग्वेदादि संहिता' ग्रंथों में भाषा की उत्पत्ति के विषय में विचार किया गया है- 'वेद' निगमन विवेचनात्मक शैली या रचना-प्रक्रिया के आधार पर प्रणीत हुए। अत: वेदों में किसी वस्तु का स्वरूप स्पष्ट करने के लिए गवेषणात्मक विधि को नहीं अपनाया गया। अत: पहचान लिया गया कि संस्कृत भाषा वेदों की भाषा है, और वेद ईश्वरकृत या अपौरुषेय ग्रंथ हैं इसलिए संस्कृत भी देववाणी या अपौरुषेय ही है। ऋग्वेद में सहस्रशीर्ष, सहस्राक्ष, सहस्रवाद में पुरुष का प्रतिपादन हुआ है, पुरुष ने ही यज्ञ या तपस्या के द्वारा सभी तत्वों एवं वस्तुओं का निर्माण किया गया है। उसी युग पुरुष या चेतना यज्ञ से गायत्री आदि छंदों के साथ ऋग्वेद, सामवेद तथा यजुर्वेद की उत्पत्ति हुई है। यथा-

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत ऋचः सामानि जामिरे।
छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद् यजुस्तस्मादजायत।

मनुस्मृति से भी अग्नि, वायु और आदित्य के माध्यम से ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद की उत्पत्ति की बात कहकर ऋग्वेद की बात की ही पुष्टि की गई है।

"दुदोह यज्ञासिद्धयर्थ ऋग्यजुसाम लक्षमम्।"

साथ ही अथर्ववेद की रचना के विषय में यह कह दिया गया कि आंगिरा के पुत्र आंगिरस ने अथर्ववेद की रचना की। आंगिरा आदि ऋषियों ने भी अथर्ववेद आंगिरस से ही सीखा है-

"अध्यापयामास पितृनः .....।"

वस्तुतः पुरुष की तपस्या 'अग्नि', वायु एवं सूर्य का दोहन व्यादयेय शब्द है, लेकिन अति धार्मिकता के कारण ऐसे शब्दों को प्रायः तर्क के धरातल पर प्रयत्न नहीं किया गया है। 'यज्ञ' शब्द यज् धातु से निष्पन्न हुआ, जिसका अर्थ-दान, सत्संगति, देवपूजन एक शब्द में इसे तपस्या भी कहते हैं। इस ईश्वरीय शब्द का अर्थ जनता-जनार्दन का यज्ञ को भाषा की उत्पत्ति के मूल में रखा जाता तो निश्चितताः वैदिक मत भारतीय वातावरण में संस्कृत भाषा की उत्पत्ति को सिद्ध करने वाला होता। 'गीता' एक दार्शनिक चेतना का ग्रंथ है, इसके दसवें अध्याय में ईश्वर की विभूतियों के नाम का उल्लेख किया गया है। स्त्रियों में ईश्वर की विभूति कीर्ति, श्री, वाणी स्मृति, मेधा, धृति क्षमा को गिनाया गया है।

"कीर्त्तिः श्रीवाक् च नारीणां स्मृतिर्मेधा धृतिः क्षमा।"
गीता, 10/34

'वाक्' शब्द का अर्थ वाणी है, वाणी निश्चय ही ईश्वर की विभूति है। इसी के कारण मनुष्य ज्ञानी हुआ, उसे शब्द की ज्योति मिली, वह भाषाविद् हुआ। अतः वाणी निश्चित ही शक्तिमती वस्तु है, और यह ईश्वर के तेज से ही उत्पन्न हुई है।

"ममतेजोशंसंभवम्।"

अनंत शास्त्र ही सभी तत्वों का उत्पत्ति केंद्र है, सब कुछ उसी से विभाजित होता है।

"अहं सर्वस्व प्रभवो मत्तः सर्व प्रवर्तते।।"

अतः इसके विकास की कौन सी प्रक्रिया है जब तक इसका विश्लेषण नहीं किया जाएगा तब तक हम इसे स्पष्ट नहीं कर पाएँगे। गीता के मतानुसार व्यक्ति ईश्वर की विभूति है। दार्शनिक चेतना का यह ग्रंथ सभी तत्वों का विकास स्वीकार करता है।

"अनेक जन्मनामान्ते ज्ञानवान मां प्रपद्यते।"

अतः जब ज्ञान का संस्कार विकास की देन है तो भाषा का संस्कार भी विकास की ही देन है, जो संस्कृत भाषा की उत्पत्ति का मूल कारण है। गीता में भगवान की यह घोषणा और शक्ति निरंतर क्रियाशील रहती है, जिससे समूची व्यवस्था को बनाए हुए है।

"उत्सीदेयुरिभे लोकान कुर्यो कर्म चेहतम।"
गीता-3/24

यह संस्कृत की ही उत्पत्ति का मूलमंत्र है। 'छान्दोग्योपनिषद' में संस्कृत भाषा की उत्पत्ति के विषय में एक शास्त्रीय दृष्टिकोण है कि- "एषां भूतानां पृथिवी रसः पृथिव्या आपो रसः।"

अपामोषधपो रस ओषधीनां पुरुषो रसः।
पुरुषस्यं वाग्रसो वाच ऋग्रस ऋचः साम रसः,
साम्न उद्गीथो रसः।

अर्थात इन सभी पंच महाभूतों- आकाश, वायु, अग्नि तथा जल का सार पृथ्वी है, क्योंकि पृथ्वी में या पृथ्वी के वातावरण में आकाश, वायु, अग्नि तथा जल सभी मिश्रित हैं, विद्यमान हैं। इसलिए पृथ्वी के ऊपर जीवनी शक्ति के फलस्वरूप वनस्पतियों की उत्पत्ति हुई। वनस्पतियों में भी औषद्य अर्थात वेद रस सर्वश्रेष्ठ है। इसी रस की स्वाभाविक क्रिया के कारण पुरुष या मानव की रचना हुई, मानव की स्वाभाविक प्रक्रिया के कारण वाक् तत्व का विकास हुआ जो कि मूलभाष्य है। इसका विकसित तत्व ऋक् तत्व है अर्थात साहित्यिक स्तर पर संस्कृत भाषा ही निर्मित है। वाणी को ऋक् तत्व से संयुक्त बतलाकर शब्द ज्योति नामक तथ्य को प्रमाणित किया गया-

वागेवर्क प्राणः सामोगित्येतदक्षरमुद्गीथः।
तद्धा एतेन्निथुनं यद्धाक्त्वा प्राणश्यर्क च साम च।

अर्थात संस्कृत भाषा की उत्पत्ति के मूल में उद्गीय तत्व तक पहुँचना प्राण में रमे 'हँस' ध्वनि-तत्व तक पहुँचना है और साथ ही ध्वनि विस्फोट का वैज्ञानिक अध्ययन भी है। स्वामी दयानंद द्वारा निर्मित साहित्य सुविशाल कथा महत्वपूर्ण है। उन्होंने "संस्कृत तथा हिन्दी दोनों भाषाओं को अपनी विचाराभिव्यक्ति का माध्यम बनाया। अधिकाधिक लोगों तक अपने विचारों को पहुँचाने की दृष्टि से जो ग्रंथ उन्होंने मूलतः संस्कृत में लिखे उनका हिन्दी में अनुवाद करना भी उन्होंने आवश्यक समझा। स्वामी जी का संस्कृत भाषा पर असाधारण अधिकार था। उनकी मातृभाषा यद्यपि गुजराती थी, परंतु संस्कृत का उत्कृष्ण आभास होने के कारण वह भाषा उनकी भावाभिव्यक्ति का सहज साधन बन गयी थी। हिन्दी

में व्याख्यान देने तथा लिखने का उन्हें यत्नपूर्वक अभ्यास करना पड़ा था। यह बात उन्होंने अपने सुप्रसिद्ध ग्रंथ 'सत्यार्थ प्रकाश' के द्वितीय संस्करण की भूमिका में स्वीकार की है।"3

व्याकरणाचार्यों ने भाषा की उत्पत्ति के विषय में अनेक प्रकार के मत व्यक्त किये हैं। आचार्य पाणिनी ने चतुर्दश सूत्रों की स्थापना की। सभी सूत्र महेश्वर की कृपा से पाणिनी को प्राप्त हुए। इसे स्पष्ट करते हुए यह भी कहा गया है कि भगवान शंकर ने अपने नृत्य की समाप्ति के समय चौदह बार अपना डमरू बजाया। सनकादि सिद्धों के उद्धार के लिए इन चौदहों (चतुर्दश) सूत्रों की रचना भी की गयी।

"इति इमानि पूर्वोक्तानि चतुर्दश सूत्राणि माहेश्वराणि+महेश्वरादाग।
तानि महेश्वर प्रसादात् पाणिनिना लब्धानीति फलितोर्थः॥"
नृतावसाने नटराजराजो ननाद ढक्कां नवचवारम।
उद्धर्तुकामः सनकादि सिद्धानेतद्विमर्शे शिवसूत्र जालम।
लघु सिद्धांत कौमुदी, प्र.-10

आचार्य हेमेंद्र ने संस्कृत भाषा को मूल भाषा कहा है और प्राकृत को संस्कृत से उत्पन्न माना है।

"प्रकृति संस्कृत तत्र भवं तत् आगतं वा प्राकृतम्॥"

भाषा वैज्ञानिकों ने संस्कृत भाषा की उत्पत्ति के गूढ़ विषय में अपेक्षाकृत अधिक गंभीरता से काम लिया है। पं. चंद्रधर शर्मा गुलेरी ने संस्कृत पूर्व आदि भाषा, को नदी के समान बताया है। कबीर ने अपने समय के आधार पर भी यही संकेत दिया है-

"संस्कृत भाषा कूप है, जनभाषा बहता नीर।"

डॉ. भोलानाथ तिवारी ने संस्कृत तथा प्राकृत भाषाओं के नामकरण एवं उद्भव के विषय में लिखा है- "ऐसा अनुमान लगता है कि एक भाषा का संस्कार करके उसके रूप को संस्कृत नाम दिय, वह भाषा जो असंस्कृत थी। पंडितों में प्रचलित भाषा के विपरीत जो प्राकृत भाषा या सामान्य लोगों में सहज रूप से बोली जाती थी स्वभावतः संस्कृत नाम की अधिकारिणी बनी है।"

गौरीशंकर पांड्या के अनुसार- "भारतीय भाषाओं का मूल स्रोत संस्कृत रही है। इतने अधिक दीर्घकाल के बाद भी संस्कृत की परंपराएँ क्षीण नहीं हुई। नवीन भाषाओं ने जो भारत में आक्रमणकारियों के साथ यहाँ आयी थीं, संस्कृत की महत्ता को चुनौती दी, किंतु संस्कृत ने अपने प्रभाव को स्थिर ही नहीं रखा बल्कि उसे और भी सुदृढ़ और गहन कर दिया, फलस्वरूप भारतीय भाषाओं के शब्द भण्डार में अधिक समानता है और उनकी व्याकरणिक रचना में एक विलक्षण साम्य प्रदर्शित होता है।"4

निष्कर्षतः संस्कृत भाषा के उद्भव के विषय में अनेक मत प्रचलित हैं। पाणिनी से पूर्व भी संस्कृत भाषा थी लेकिन संस्कृत विभिन्न भाषाओं की जननी है, जो प्राचीन भाषा है। पाणिनी ने वैदिक तथा लौकिक दोनों ही रूपों को संस्कृत में व्याकरण किया, जिससे संस्कृत को परिनिष्ठित रूप प्राप्त हुआ। आज संस्कृत भाषा को विश्व पढ़ रहा है। देश-विदेश में वैज्ञानिक इस पर शोध कार्य कर रहे हैं। विदेशों में स्कूली शिक्षा नीति पर प्राथमिक रूप से ही संस्कृत पढ़ाई-सिखाई जा रही है। भाषा वैज्ञानिकों ने सभी प्रकार से संस्कृत भाषा को अति विशिष्ट माना है। यह हमारी प्राचीन भाषा है। देवों की भाषा है, यह वेदों की भाषा है, इस भाषा में भविष्य की बहुत संभावनाएँ निहित हैं।

संदर्भ :

01. डॉ. अरुणा कुमारी बैस, अर्वाचीन संस्कृत साहित्य का काव्यशास्त्रीय अध्ययन, पृ.-01, दुर्गा पब्लिकेशंस, दिल्ली, प्रथम सं.-2011
02. डब्ल्यू डी. ह्विटने, अनुवाद- डॉ. मुनीश्वर झा, भूमिका- संस्कृत व्याकरण, उ.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, प्रथम सं.-1971
03. डॉ. भवानीलाल भारतीय, ऋषि दयानंद और आर्य समाज की संस्कृत साहित्य को देन, पृ.सं.-47, श्री रामलाल कपूर ट्रस्ट, अमृतसर, प्रथम सं-2011
04. गौरीशंकर पांड्या, भारतीय भाषाओं के साहित्य का रूपदर्शन, पृ.सं.-10, इंद्रप्रस्थ प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम सं.-1982

-डॉ. दिग्विजय कुमार शर्मा
अनुसंधान एवं भाषा विकास विभाग,
केंद्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा

हम हिन्दुस्तानियों का
एक ही सूत्र रहे-
हमारी राष्ट्रभाषा हिन्दी,
हमारी राष्ट्र लिपि नागरी ।
-रेहाना तैयबजी

संस्कृत : सार्वभौमिक कल्याण की भाषा

डॉ. रमेश पोखरियाल 'निशंक'

भाषा सदा ही समाज और संस्कृति का यथार्थ परिचय देती है। एक सभ्य समाज के लिए एक समृद्ध भाषा का होना, बड़ा योगदान माना जाता है और जब किसी समृद्ध भाषा द्वारा पारिवारिक संस्कारों को आने वाली पीढ़ियों के लिए हस्तांतरित किया जाता है तो निश्चित ही एक शात आनन्द देने वाली सभ्यता का उदय होता है। जिसमें परस्पर प्रेम अंकुरित होता है, करुणा और वात्सल्य के भाव अपने आप प्रस्फुटित होते हैं, सहजता और सरलता व्यक्तित्व में पल-पल पर दिखलाई पड़ते हैं, संवेदनाओं और आत्मसम्मान को स्थान मिलता है। अत: आज आवश्यकता है एक ऐसी सार्वभौमिक कल्याण की भाषा की जो हमें अपनों से संवाद कराना सिखाए, जो हमें अपनी वास्तविक पहचान करना बताए और जो हमें 'तमसो मा ज्योतिर्गमय' अर्थात अन्धकार से प्रकाश की ओर लेकर जाए। विश्व में अपना कीर्तिमान स्थापित करने वाला देश भारत वर्ष 'संस्कृत भाषा' की भूमि से ही आता है। 'संस्कृत भाषा' वह भाषा है जिसमें एक सभ्य समाज, समृद्ध परिवार, उन्नत राष्ट्र, निर्मल विचार, प्रबल मेधा, प्रशिक्षित कौशल, तर्कसंगत संवाद और सर्वांगीण मानवीय आचार-विचार-व्यवहार को संस्कारित किया जाता है। ये संस्कार ही हमारी संस्कृति की हजारों वर्षो से रक्षा कर रहे हैं। और इसी भारतीय संस्कृति पर आज दुनिया अनुसंधान कर रही है व इसके मूल यानी कि 'संस्कृत भाषा' को आत्मसात करना चाहती है। अनुसंधानपरक 'संस्कृत भाषा' में सन्निहित साहित्यिक-सामाजिक-सांस्कृतिक-पर्यावरणिक-प्रशासनिक-आर्थिक-कार्मिक-मार्मिक एवं नैसर्गिक मूल्यों की रक्षा के लिए आज देश में संस्कृत केंद्रीय विश्वविद्यालय की महती आवश्यकता है।

भारत का 'संविधान' हमें अधिकार और कर्तव्य प्रदान करता है 'समष्टि' के लिए, न की 'व्यष्टि' के लिए। यह सब विचार व शिक्षा हमें, हमारे संविधान निर्माताओं ने संस्कृत भाषा में निहित विपुल ज्ञान से ही दिए हैं। इसलिए संस्कृत भाषा का केंद्रीय विश्वविद्यालय के रूप में संवर्धन और संरक्षण आवश्यक है। संस्कृत भाषा में ऐसा विज्ञान है, जो भारत ने दुनिया को दिया उदाहरणस्वरूप महर्षि बौधायन ने जो गणितीय प्रमेय सिद्धान्त की व्याख्या की है वह आज पूरी दुनिया स्वीकार करती है। भारतीय चिकित्सा शास्त्र के तीन बड़े नाम महर्षि चरक, महर्षि सुश्रुत, महर्षि वाग्भट हैं। इन्होंने संस्कृत भाषा में चिकित्सा-सूत्र दिए, जिससे प्राणी के मर्म की रक्षा हो वहीं महर्षि पतंजलि ने शारीरिक एवं मानसिक सौष्ठव के लिए योग-सूत्र दिए जिससे तन स्वस्थ एवं मन-मस्तिष्क एकाग्र होता है तो वहीं वाणी शुद्धि के लिए महर्षि पाणिनि ने व्याकरण शास्त्र दिया। अत: सिद्ध होता है की संस्कृत भाषा हमें हर प्रकार से उन्नत करने में सक्षम है। संस्कृत भाषा ने भूगोल से खगोल तक पूरी दुनिया को अपरिमित ज्ञान राशि दी है। महर्षि आर्यभट्ट, महर्षि वराहमिहिर और आचार्य लगध, महर्षि भारद्वाज ने हमें ब्रह्माण्डीय ज्ञान दिया है। यह शुद्ध गणित के सिद्धांतों पर आधारित है। आज हम आकाशगंगा में सुदूर नक्षत्रों की काल गणना भी स्पष्टतया कर लेते हैं।

यह सब अखण्ड ज्ञान पाश्चात्य में प्रसारित हुआ तो केवल और केवल संस्कृत भाषा की वैज्ञानिक दृष्टिकोण के कारण ही। इस देश की संसद के इतिहास में पहली बार ऐसा देखने को मिला जब 17वीं लोक सभा में बहुभाषीय प्रांतों से माननीय 44 सांसदों ने संस्कृत भाषा में अपनी 'पद और गोपनीयता' की शपथ ली। पूरी दुनिया को यह आश्चर्य कर देने वाली बात थी कि संस्कृत भाषा की जीवंतता भारत की संसद में और प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी जी के नेतृत्व युक्त प्रशासन में देखी जा रही है। जब जन-प्रतिनिधियों द्वारा संसद में प्रत्येक विषय स्थापित किए जाते हैं, तो वे सभी विषय राष्ट्र-समुत्थान के लिए हैं न कि व्यक्ति विशेष के लिए। और यह लोक-कल्याण भावना की प्रेरणा हमें संस्कृत की सूक्तियों से ही मिलती हैं। वेदों की ऋचाओं से ही मिलती हैं। राज्य सभा के 251 वें सत्र में केंद्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय पर एक बिल मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा प्रस्तुत किया गया है। प्रधानमंत्री मोदी जी के नेतृत्व में संस्कृत के तीन प्रतिष्ठित केंद्रीय विश्वविद्यालय विश्वस्तरीय ज्ञान-विज्ञान और अनुसंधान पूरी दुनिया को देंगे। जब लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ, नई दिल्ली, राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान और राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ, तिरुपति, केंद्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय बनेंगे तो युवाओं में संस्कृत पढ़ने की अनुसंधान करने की प्रबल रुचि अपने आप जागृत होगी। इन केंद्रीय संस्कृत विश्वविद्यालयों में संस्कृत, पाली और प्राकृत की पांडुलिपियों पर अनुसंधान और प्रकाशन का भी अवसर मिलेगा। इन केंद्रीय संस्कृत विश्वविद्यालयों में विश्वस्तरीय अध्यापक और वैज्ञानिक मिलकर काम भी कर सकेंगे।

भारत के प्राचीन ज्ञान गौरव नालंदा, तक्षशिला और विक्रमशिला विश्वविद्यालयों की पूर्ति निश्चित ही ये तीन केंद्रीय विश्वविद्यालय सुनिश्चित करेंगे। भारत से बाहर अनेक देशों में प्राथमिक स्तर पर ही संस्कृत भाषा का छात्रों को प्रशिक्षण दिया जा रहा है। लंदन जहां एक विद्यालय सेंट जेम्स स्कूल अपने छात्रों को

शेष पृष्ठ संख्या 27 पर

हिन्दी को कमजोर करने की कोशिश

प्रो. गिरीश्वर मिश्र

भोजपुरी को संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल कराने की मांग को लेकर विभिन्न स्तरों पर प्रयास हो रहे हैं। दिल्ली के जंतर-मंतर पर भोजपुरी जन न्यूज ऑनलाइन अभियान के तत्वाधान में इस मांग के समर्थन में धरना आयोजित किया गया । सांसद मनोज तिवारी ने भी संसद में इस मांग को उठाया। हालांकि चौदहवीं लोकसभा में इसका आश्वासन भी दिया गया था, लेकिन वादा पूरा नहीं किया गया। भोजपुरी के हिमायती कहते हैं कि नेपाली सांसदों ने भोजपुरी में शपथ ली थी, मॉरीशस में बड़ी तादाद में भोजपुरी बोलते हैं फिर करोड़ों लोगों की इस भाषा को आठवीं अनुसूची के हक से क्यों वंचित रखा जा रहा है? संविधान की आठवीं अनुसूची भारतीय गणतंत्र की स्वीकृत भाषाओं को जगह देती है। अपेक्षा थी ये सभी भाषाएं हिन्दी को राजभाषा के रूप में स्थापित करने में मददगार होंगी। शुरुआत में इसमें 14 भाषाएं थीं। वर्तमान में 22 भाषाएं हैं। देश में प्रचलित अन्य 38 बोलियां-भाषाएं इस सूची में शमिल होने का दावा कर रही हैं, लेकिन सवाल उठता है कि इसमें किसे जगह दी जाए और उसका पैमाना क्या बने? आज भाषा की जो राजनीति हो रही है वह न केवल हिन्दी के हितों के विपरीत है, बल्कि अंग्रेजीपरस्ती का भी प्रमाण है। अंग्रेजी ने हिन्दी के अन्य भारतीय भाषाओं के साथ रिश्ते में सेंध लगाई है। अन्यथा लोक भाषाओं से तो हिन्दी का गहरा लगाव है। हिन्दी भाषी असल में द्विभाषी हैं। हिन्दी के साथ-साथ वे भोजपुरी, हरियाणवी, अवधी और ब्रज से लेकर कुमाऊंनी जैसी तमाम लोक भाषाओं का मिश्रण करते हैं। लोकभाषाओं के साथ हिन्दी का यह संगम बड़ी सहजता के साथ होता है। लोकभाषाएं हिन्दी में घुली हुई हैं। हिन्दी साहित्य में अवधी, ब्रज और भोजपुरी का अतुलनीय योगदान है। क्या कबीर, सूर, तुलसी, रहीम और जायसी के बिना हिन्दी असल में हिन्दी रह सकेगी? बावजूद इसके भाषा के नाम पर राजनीति लगातार जारी है। हिन्दी पट्टी की लोकभाषाएं हिन्दी की बड़ी ताकत हैं। देश में भाषाओं और संस्कृतियों के बहुत मेल होते हैं। आज जरूरत है कि दिखावे की मानसिकता से उबरकर अंग्रेजी के खिलाफ भारतीय भाषाओं के मान-स्वाभिमान और चेतना के लिए कर्मठता से काम किया जाए।

भाषा संवाद के माध्यम से समाज की आधारशिला रखती है। मानवीय संबंधों और सामाजिकता का आधार भी भाषा ही प्रदान करती है। भाषा से समाज की स्मृति निर्मित होती है जो उसकी परंपराओं को संभव बनाकर उसे गतिशील रखती है। इस लिहाज से अपनी हजारों वर्षों की यात्रा में हिन्दी ने लंबा सफर तय किया है। स्वतंत्रता आंदोलन में वह भारत की एक प्रतिनिधि भाषा बन गई। वह सफलतापूर्वक अभिव्यक्ति का माध्यम और सहज संपर्क भाषा के रूप में देशवासियों को जोड़ने का काम कर रही थी। बापू समेत अनेक लोगों द्वारा उसे 'राष्ट्रभाषा' कहा जाने लगा। आजादी के बाद धीरे-धीरे अखबार, रेडियो, सिनेमा, टीवी आदि ने हिन्दी का सार्वजनिक जीवन में तीव्र गति से प्रचार-प्रसार किया। अब इंटरनेट के जरिये ट्विटर, ब्लॉग, यूट्यूब जैसे सोशल मीडिया ने भाषा प्रयोग का नक्शा ही बदल दिया है। इन माध्यमों से हिन्दी की लोकप्रियता बढ़ी है। बाजार और मनोरंजन की दृष्टि से भी हिन्दी और सुदृढ़ हुई है, मगर अब शुद्ध हिन्दी के बजाय अंग्रेजी के साथ मिलकर बनी हिंग्लिश रूपी खिचड़ी का ही अधिक इस्तेमाल हो रहा है।

भारतीय संविधान देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली हिन्दी को देश की राजभाषा घोषित करता है। राज्य अपनी भाषा चुन सकते है और उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड, राजस्थान, मध्य प्रदेश, झारखंड, हिमाचल, बिहार और छत्तीसगढ़ ने हिन्दी को प्रदेश की राजभाषा का दर्जा दिया है। हिन्दी पट्टी में लगभग 45 प्रतिशत भारतीय आते हैं। अंग्रेजी राज में अंग्रेजी संघ स्तर पर भाषा थी। 1950 में हिन्दी को 'राजभाषा' स्वीकार किया गया। यह आशा थी कि अगले 15 वर्षों में वह अंग्रेजी का स्थान ले लेगी, मगर यदि आवश्यकता हो तो आगे भी यह व्यवस्था चल सकेगी। राजभाषा अधिनियम, 1963 में कहा गया कि आगे भी हिन्दी और अंग्रेजी व्यवहार में चलती रहें। 1967 में यह निर्णय हुआ कि जब तक संसद कोई प्रस्ताव न पारित करे तब तक यह व्यवस्था बदस्तूर चलती रहेगी। इसमें कहा यही गया कि 'हिन्दी के अतिरिक्त अंग्रेजी चलती रहेगी', लेकिन व्यावहारिक रूप से अंग्रेजी ही प्रमुख बनी रही और हिन्दी मात्र अनुवाद की भाषा बन कर रह गई। इस तरह संवैधानिक व्यवस्था के अनुसार अंग्रेजी का भविष्य अनंत काल के लिए सुरक्षित और हिन्दी का भविष्य सर्वदा के लिए अनिश्चित हो गया। अंग्रेजी में कायदे-कानून रहेंगे तो लोकशाही की कोई संभावना नहीं बनती है। ऐसे में लोक भाषा का प्रयोग न होने के कारण स्वतंत्र भारत में जनता परतंत्र ही बनी रहेगी। देश का भाषागत परिदृश्य जटिल होता जा रहा है।

गैर-अंग्रेजीदां लोगों की प्रतिभा को दरकिनार करते हुए पराई भाषा ही मजबूत होती जा रही है। अभी भी दस्तावेज अंग्रेजी में ही प्रामाणिक माने जाते हैं। जीवन को समृद्ध करने, अच्छी नौकरी

और सम्मान अर्जित करने के लिए अंग्रेजी का ही आश्रय लेना पड़ता है। इसे अकाट्य सत्य मान लिया गया है। इससे अपनी भाषा के प्रति अवमानना का भाव भी लोगों में दिखता है। शायद अन्य भारतीय भाषाओं के लोगों में यह हीनता ग्रंथि उतनी मजबूत नहीं। यदि विकास का मूल्यांकन करें तो स्वतंत्रता पूर्व की व्यापक राष्ट्रभाषा अब सीमित राजभाषा की ओर आगे बढ़ रही है और उसकी भूमिका संदिग्ध बनी हुई है। शासन की अंग्रेजीपरस्त नीति के चलते भारतीय भाषाओं पर अत्याचार होते रहे। आर्थिक उपनिवेशवाद और उसी से जुड़े भाषाई उपनिवेशवाद के तहत अंग्रेजी भाषा प्रयोग की उत्कंठा से भारतीय आभिजात्य वर्ग का उदय हुआ। सांस्कृतिक पराधीनता के चलते सत्ता को दृढ़ करने के लिए भाषा को नष्ट करने के उद्देश्य से स्वतंत्र भारत में अंग्रेजी सत्ता की भाषा बनी। उदारीकरण की छाया में पनप रहे नव साम्राज्यवाद के अंतर्गत ज्ञान-विज्ञान और तकनीकी जीवन दृष्टि के साथ अमेरिकी या यूरोपीय उपनिवेश बनने पर आमादा हो रहे हैं। इन सबका उद्देश्य भविष्य की पीढ़ियों को उनकी भाषा और संस्कृति से विपन्न बनाना है, मगर भारत देश की इमारत विदेशी भाषा की नींव पर नहीं बन सकती। उसकी सभ्यता की जड़ें अंग्रेजी में नहीं मिलेंगी।

निष्ठा की कमी और अंग्रेजी की श्रेष्ठता का दबाव-ये दो प्रमुख कारण हैं कि हम भाषा के प्रश्न को सुलझा नहीं पाए हैं। अंग्रेजी जकड़बंदी से मौलिक चिंतन और ज्ञान-निर्माण को श्राप लग चुका है। भाषा की शक्ति उसके प्रयोग से ही आती है। अंग्रेजी का आतंक उसे 'अंतर्राष्ट्रीय' करार देकर बनाया गया है। न्यायपालिका, प्रशासन और संभ्रांत पेशों में अंग्रेजी की ही धाक बनी रही। हमारे जनप्रतिनिधि यदि हिन्दी जानते हैं तो नौकरशाहों को अंग्रेजी ही रास आती है। कुलीन उच्च वर्ग का स्वार्थ और सामंती वर्चस्व स्थापित रखने की तीव्र आकांक्षा के तहत अंग्रेजी स्थापित और प्रतिष्ठित बनी रही। वह सत्ता से जुड़ी और उसका साम्राज्यवादी रूप आकर्षक बन गया। गैर-अंग्रेजीदां लोगों का रसूख घटने लगा। अंग्रेजी हटाने की मानसिकता नहीं बनी। आज आलम यह है कि बिना अंग्रेजी जाने किसी उच्च पद पर पहुंचने की कल्पना भी नहीं की जा सकती।

आलेख साभार: दैनिक जागरण, न्यूज ऑनलाइन

-प्रो. गिरीश्वर मिश्र,
महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय विश्वविद्यालय
के पूर्व कुलपति हैं ।

पृष्ठ संख्या 25 का शेष

संस्कृत भाषा में पारंगत कर रहा है। ऑक्सफोर्ड से पढ़ी लंदन की एक युवती गैब्रिएला बर्नेल संस्कृत भाषा के वैश्विक प्रचार के लिए प्रतिदिन संस्कृत में मधुर गीत गाती हैं। इतना ही नहीं लंदन की एक अन्य महिला लूसी गेस्ट संस्कृत भाषा में पिछले 30 वर्षों से शोध कर रही है। वह धाराप्रवाह संस्कृत बोलती हैं। संस्कृत को सरल माध्यम से सीखने के लिए लंदन की ही एक महिला ए.एम. रुप्पेल की पुस्तक को ही देख लीजिए।

आयरलैंड का एक स्कूल जॉन स्कॉट्स स्कूल अपने पाठ्यक्रम में छात्रों को संस्कृत पढ़ाता है। उस विद्यालय के धारा-प्रवाह संस्कृत बोलने वाले संस्कृत-अध्यापक रुट्गर कोर्टन-होस्ट प्रत्येक वर्ष अपने विद्यालय के छात्रों को गहन अध्ययन के लिए भारत के गुरुकुलों में ले जाते हैं। पीएचडी कर चुके वैज्ञानिक डॉ. जेम्स हट्र्जेल ने अपने शोध से सिद्ध किया कि संस्कृत भाषा को सीखने पर स्मृति तेज होती है। उनका यह शोध 'संस्कृत इफेक्ट' नाम से अमेरिका के प्रसिद्ध 'साइंटिफिक अमेरिकन जर्नल' में प्रकाशित हुआ है। अमेरिका के 'ब्रॉउन यूनिवर्सिटी के संस्कृत प्रोफेसर डॉ. पीटर.एम. श्रॉफ आजकल भारत में 'कम्प्युटेशनल संस्कृत लिंग्विस्टिक' पढ़ाते हैं। एक विशेष बात यह है कि हाल ही में भारत यात्रा पर आई हुई थाईलैंड की राजकुमारी चाक्रि सिरिनधोर्न ने स्वयं संस्कृत का अध्ययन किया है।

-डॉ. रमेश पोखरियाल 'निशंक'
माननीय केन्द्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री, भारत सरकार

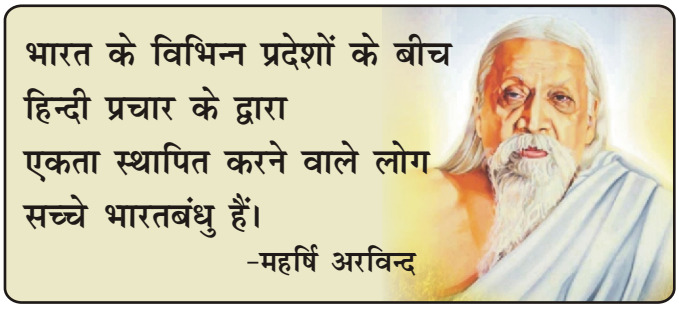

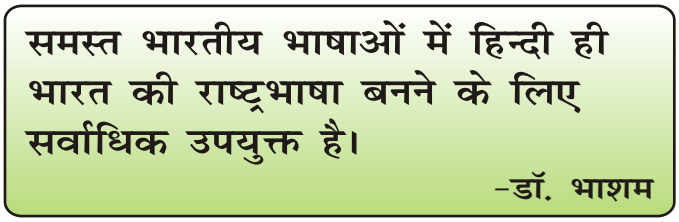

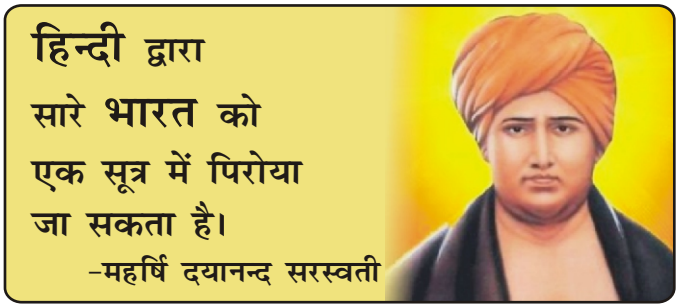

भाषा तकनीकें तो आ गईं, आगे क्या?

बालेन्दु शर्मा दाधीच

दशकों से हम हिन्दी में इस सॉफ्टवेयर, उस फीचर, इस टूल या उस युटिलिटी की मांग करते रहे हैं। मौजूदा सुविधाओं को बेहतर बनाने, नए-नए आधुनिक अनुप्रयोगों का विकास करते रहें हैं। साथ ही हम हमारे संख्याबल को रेखांकित करते हुए हिन्दी में उभर रहे बाजार और विशाल उपभोक्ता संसार के प्रति भी गर्व से भरे रहे हैं। लेकिन हर बात की एक उम्र होती है और होनी चाहिए। तकनीकी क्षेत्र में हिन्दी में क्या कुछ नया घटित हो गया है इसे लेकर अब उत्सव मनाते नहीं चले जाना चाहिए। वह नया घटित होने के बाद हिन्दी विश्व को जो कुछ करना था, अब उस पर ध्यान केंद्रित करने का समय है। हिन्दी में अच्छे फॉन्ट आ गए। कई किस्म के टाइपिंग की-बोर्ड आ गए। यूनिकोड आ गया। ध्वनि से टाइपिंग की तकनीक भी आ गई। व्याकरण की जाँच भी होने लगी। पुराना टेक्स्ट भी कनवर्ट होने लगा। हिन्दी में खोज होने लगी। हिन्दी में मोबाइल ऐप्प आ गए। हिन्दी में सोशल नेटवर्किंग आ गई। ई-मेल और ब्लॉगिंग आ गई। अखबारों से लेकर वीडियो चैनलों तक के अनुप्रयोगों में हिन्दी चलने लगी। ग्राफिक्स और एनिमेशन में हिन्दी आ गई। ओसीआर, हस्तलिपि की पहचान जैसे आधुनिक अनुप्रयोग भी आ गए। सभी जरूरी सॉफ्टवेयरों का हिन्दीकरण भी हो गया। क्या अब भी हम बस मांग ही करते चले जाएंगे? हिन्दी में हमें यह सोचने की जरूरत है कि इन सब चीजों की मांग आखिर हम क्यों कर रहे थे? कोई तो गंतव्य रहा होगा, जिस तक पहुंचने के लिए हमें इन सबकी जरूरत थी। क्या अब हम मांग की मानसिकता छोड़कर उस गंतव्य की यात्रा शुरू कर सकते हैं? तकनीक एक साधन मात्र है, वह उद्देश्य नहीं है और मर्म भी नहीं है। तकनीक की कमी और उसकी सीमाएँ एक बहाना हो सकती हैं लेकिन वह स्थायी रूप से व्यस्त बने रहने का सार्थक माध्यम नहीं है। सवाल उठता है कि अगर यह सब आ गया तो अब करें क्या? बहुत खूब! हम अपनी मांगों और आकांक्षाओं का चार्टर बनाने में इतने व्यस्त रहे कि कभी सोचा ही नहीं कि खुदा न ख्वास्ता ये मांगें पूरी हो गईं तो हम क्या करेंगे ? खैर एक पंक्ति में कहा जाए तो हमें हिन्दी की तकनीकी समृद्धि और ताकत का इस्तेमाल अपने-अपने संस्थान, परिवार और देश की तरक्की के लिए करने का समय आ गया है। हिन्दी की तकनीकी सुविधाओं का इस्तेमाल देश में उत्पादकता बढ़ाने, शिक्षा का प्रसार करने, बाजार को मजबूती देने, लोगों को रोजगार देने, नवोन्मेष को बढ़ावा देने, रचनात्मकता बढ़ाने, कन्टेन्ट तैयार करने, सेवाएँ शुरू करने, सेवाएँ मुहैया कराने, समाज में तकनीकी मिजाज को प्रोत्साहित करने में किया जाना चाहिए। हिन्दी में रचनात्मकता बढ़े, हिन्दी में अंग्रेजी की ही तरह तकनीक की आर्थिक-रचनात्मक दृष्टि से आत्मनिर्भर पारिस्थिति की (इको-सिस्टम) पैदा हो, हिन्दी नारायणमूर्ति, अजीम प्रेमजी और सत्य नडेला जैसे तकनीकी दृष्टाओं तथा उद्यमियों को पैदा करे, हिन्दी आधारित स्टार्टअप्स की बाढ़ आ जाए, जहाँ भी ई-शब्द का प्रयोग होता है (जैसे ई-कॉमर्स, ई-गवर्नेंस, ई-हेल्थ, ई-एजुकेशन आदि-आदि) वहाँ हिन्दी की स्वाभाविक और मजबूत उपस्थिति हो । हमें थोड़ा भविष्योन्मुखी और व्यावहारिक होकर सोचने की जरूरत है कि अब आगे क्या?

फिलहाल हम हिन्दी की तकनीकी तरक्की का बहुत अधिक उपयोग नहीं कर पा रहे। हमारा जोर औपचारिक दफ्तरी कामकाज, संचार और मनोरंजक-सूचनात्मक सामाग्री के उपभोग पर है । चाहे वीडियो देखे जाने के लिहाज से, चाहे फेसबुक तथा व्हाट्सऐप्प जैसे सोशल नेटवर्किंग माध्यमों के इस्तेमाल के लिहाज से हम हिन्दी वाले सबसे आगे हैं। लेकिन क्या इस पर बहुत अधिक खुश होने की जरूरत है? बिल्कुल नहीं, क्योंकि हम कन्टेन्ट, सेवाओं और सुविधाओं की खपत करने वाले समाज के रूप में उभर रहे हैं। इसमें तो खुशी उन लोगों की अधिक है जिनके कन्टेन्ट, उत्पादों, सेवाओं आदि का प्रयोग हम कर रहे हैं क्योंकि हम उनका प्रयोक्ता-आधार बढ़ा रहें है । फेसबुक के प्रयोक्ताओं के लिहाज से भारत पहले नंबर पर है । इसमें फेसबुक का अधिक लाभ है, हमारा कम। अगर हम फेसबुक जैसे प्लेटफॉर्म खड़े करने लगें या फिर वह न हो सके तो कम-से-कम फेसबुक को ही हमारी उद्यमिता का जरिया बना लें तो उसमें हमारा फायदा है। चीन को देखिए। वहाँ किशोरों से लेकर युवक तक ई-कॉमर्स प्लेटफार्मों में सक्रिय हैं और इधर-उधर से कोई न कोई माल जुटाकर बेचने में लगे है । वह भी हमारी तरह सर्वाधिक जनसंख्या वाला देश है लेकिन वह मेज के इस ओर नहीं बल्कि उस ओर भी जा चुका है। हम अपनी भाषा को तकनीकी उपभोक्ताओं की फैक्टरी बनाकर अपने या देश के लिए बहुत अधिक हासिल नहीं कर सकेंगे।

एक दिलचस्प तथ्य यह है कि हिन्दी में हम मांग अवश्य करते हैं लेकिन जब वह उस मांग को पूरा करते हुए कोई सॉफ्टवेयर उत्पाद या फीचर जारी हो जाता है तो उसमें हमारी दिलचस्पी नहीं रह जाती। हिन्दी में काम करने वाले कितने सॉफ्टवेयरों को हम वास्तव में खरीदते हैं? अनुवाद को छोड़कर दूसरे कितने आधुनिक तकनीकी अनुप्रयोगों का इस्तेमाल हम करते हैं? हिन्दी में लाए गए कितने ऑपरेटिंग सिस्टमों के यूजर इंटरफेस का प्रयोग हम करते हैं। हिन्दी में आने वाले प्लेटफॉर्मों को हमें बढ़ावा देना चाहिए लेकिन

क्या हम ऐसा करते हैं? हिन्दी वेबसाइटों पर कितने विज्ञापनों को हम देखते और क्लिक करते हैं? कितने एप्लीकेशनों का हम दोबारा प्रयोग करते हैं? क्योंकि हिन्दी में किसी चीज को एक बार आजमाने वाले तो बहुत हैं लेकिन दोबारा वहाँ पर आकर उपयोग करने वालों की संख्या बेहद सीमित है। मैं यहाँ पर भाषा तकनीकों के गुणवत्तापूर्ण तथा उत्पादकतापूर्ण प्रयोग की बात कर रहा हूँ। चाहे जितना तकनीकी विकास हो जाए, यदि उपभोक्ता उसे समर्थन नहीं देंगे तो भारतीय भाषाएँ उस किस्म की तकनीकी सक्षमता प्राप्त नहीं कर सकेंगी जैसी हमारी आकांक्षा है। संख्याबल का उत्सव मनाने से आगे बढ़कर हमें खुद अपनी भाषाओं में तकनीकी तरक्की का नियंत्रण संभालना होगा। एक उदाहरण देखिये- बोलने वालों की संख्या के लिहाज से दुनिया की शीर्ष बीस भाषाओं में से छह भाषाएँ भारत की हैं जिनमें हिन्दी तीसरे नंबर पर है (हममें से बहुत से लोग इसे दूसरे नंबर पर मानते हैं) । किन्तु इंटरनेट पर कंटेन्ट के लिहाज से हिन्दी का स्थान 41 वाँ है । मुझे याद आता है कि लगभग 15 साल पहले गूगल के तत्कालीन सीईओ एरिक श्मिट ने कहा था कि आने वाले पाँच-दस सालों में इंटरनेट पर जिन दो भाषाओं का प्रभुत्व होगा, वे हैं- मंदारिन और हिन्दी । खुश होने के लिए बहुत अच्छा उद्धरण है यह लेकिन वह अवधि कब की निकल चुकी है और जहाँ इस बीच मंदारिन इंटरनेट की दसवीं सबसे बड़ी भाषा बन चुकी है, हिन्दी अभी भी 41 वें नंबर पर है । महत्वपूर्ण बात यह है कि हम बातों से आगे बढ़ें और वर्तमान अनुकूल परिस्थितियों का अधिकतम लाभ उठाते हुए आगे के लिए सुदृढ़ आधारशिला के निर्माण में जुटें ।

(लेखक माइक्रोसॉफ्ट में कार्यरत वरिष्ठ तकनीकविद और पूर्व संपादक हैं ।)

-बालेन्दु शर्मा दाधीच
504, पार्क रॉयल,जी.एच. 80
सेक्टर-56, गुरुग्राम, हरियाणा-011122

विशेष सूचना

'हिन्दुस्तानी भाषा भारती' त्रैमासिक पत्रिका के आगामी अंक हेतु लेख आमंत्रित हैं ।

हिन्दुस्तानी भाषा भारती पत्रिका के आगामी अंक हेतु हिन्दी भाषा से संबंधित विविध विषयों पर लेख/आलेख एवं शोध सामग्री भेजें। पत्रिका के स्थायी स्तम्भ 'चमत्कार लोक भाषाओं का' के अंतर्गत किसी एक भारतीय भाषा को विशेषांक के रूप में प्रकाशित किया जाता है। अब तक बुंदेली, कुमाऊँनी, सिंधी,भोजपुरी, छत्तीसगढ़ी, पंजाबी, राजस्थानी, नेपाली, मैथिली, अवधी, डोगरी एवं पूर्वोत्तर राज्यों की भाषाओं के लेख प्रकाशित हो चुके हैं। पत्रिका के आगामी अंक हेतु कृपया संथाली भाषा और उसका साहित्य, हिन्दी और संथाली भाषाओं के बीच तुलनात्मक अध्ययन, आधुनिक हिन्दी साहित्य में संथाली भाषा की उपस्थिति, आठवीं अनुसूची एवं संथाली भाषा की वर्तमान स्थिति, मातृभाषा शिक्षा और संथाली भाषा, संथाली भाषा के संरक्षण में सरकार एवं समुदाय की भूमिका आदि से संबंधित सारगर्भित लेख नीचे दी गई ई-मेल पर भेजें।

E-mail : hindustanibhashabharati@gmail.com

हिन्दी अब सारे देश की राष्ट्रभाषा हो गई है। उस भाषा का अध्ययन करने और उसकी उन्नति करने में गर्व का अनुभव होना चाहिए।

-सरदार वल्लभभाई पटेल

हिन्दी भाषा साहित्य में संस्कृत का योगदान

हिन्दी संसार की भाषाओं में एक विशिष्ट स्थान रखती है। इसका गठन एक सुनिश्चित वैज्ञानिक पद्धति से हुआ है। इसका विकास इस तरह हुआ है जैसे खूब सोच विचार कर शब्द किसी ने गढ़े हों। भ्रम और संदेह की गुंजाइश ही नहीं है। सब कुछ तर्कपूर्ण पद्धति पर आधारित है। हिन्दी के विकास में संस्कृत के तमाम अपभ्रंशों का योगदान है लेकिन हिन्दी संस्कृत से अलग चलती है। यही हिन्दी का वास्तविक स्वरूप है। हिन्दी का व्याकरण अलग है और संस्कृत का व्याकरण अलग है। जिस तरह हिन्दी के व्याकरण पर संस्कृत को नहीं चलाया जा सकता, ठीक उसी तरह से संस्कृत का व्याकरण हिन्दी में लागू नहीं किया जा सकता।

यहाँ यह नहीं समझना चाहिए कि लेख में हिन्दी को संस्कृत से श्रेष्ठ साबित करने की कोशिश हो रही है। संस्कृत पूर्ण वैज्ञानिक भाषा है। हमारी आदि भाषा है। जब संस्कृत में राजकाज होता था उस समय भी संस्कृत विशिष्ट जनों की भाषा थी। जनसामान्य में इसका अपभ्रंश प्राकृत रूप में चलन में था। लेकिन हिन्दी संस्कृत के प्राकृत रूपों के प्राकृत रूपों से निकलकर विकसित हुई भाषा है। हिन्दी की विशेषता इसका समावेशी गुण हैं। यह अन्य भाषाओं के शब्दों को भी अपने अनुरूप ढाल लेती है। इसी तरह हिन्दी ने आदर के साथ संस्कृत के शब्दों को भी लिया है लेकिन उन्हें अपने व्याकरण के अनुरूप चलाया है। यही हिन्दी के लगातार व्यापक होते जान का कारण है। पिछले एक दशक में हिन्दी के दस करोड़ से अधिक जानने वाले बढ़े हैं। इस संबंध में हिन्दी के पाणिनि आचार्य किशोरी दास बाजपेयी का उल्लेख अनिवार्य है। जिन्होंने संस्कृत के विद्वान होते हुए भी हिन्दी को संस्कृत के व्याकरण की छाया से मुक्त करते हुए एक सर्वमान्य व्याकरण दिया। संस्कृत के व्याकरण से अलग हिन्दी की प्रकृति को उसके व्याकरण को स्थापित किया। इस संबंध में हिन्दी मनीषी राहुल सांकृत्यायन का आचार्य किशोरी दास वाजपेयी पर लिखा गया एक लेख उल्लेखनीय है जिसमें वह कहते हैं कि वाजपेयी जी किशोरी लाल गोस्वामी से इसलिए झगड़ बैठे थे कि उन्होंने एक वाक्य में दश प्रकार की भक्ति के दश को काटकर दस गलत क्यों कर दिया। यह बात 1916 की है। गोस्वामी जी ने उस समय मुस्कुरा कर केवल इतना कहा था कि हिन्दी में दश की जगह दस ही चलता है, यह सब आगे मालूम हो जाएगा। यह देखने में छोटी सी बात किशोरी दास जी के लिए बड़ी जबरदस्त शिक्षा थी। उन्हें यह समझने में देर नहीं लगी की हिन्दी एकदम संस्कृत की चेरी नहीं है। इसीलिए समय आने पर किशोरीदास वाजपेयी ने हिन्दी के प्रथम व्याकरण को लिखा और फिर इसका विस्तार हिन्दी शब्दानुशासन में किया।

आचार्य वाजपेयी का व्याकरण आने से पहले हिन्दी की स्थिति यह थी कि हर समय संस्कृत के व्याकरण के आधार पर हिन्दी पढ़ाने की कोशिश की जाती थी। संस्कृत के विद्वान जब हिन्दी में लेखन कार्य करते थे तो वह अपने दृष्टिकोण को छोड़े बगैर अनेक हिन्दी शब्दों का ठीक से प्रयोग नहीं कर पाते थे। हिन्दी अपने क्षेत्र में स्वयं सार्वभौम सत्ता रखती है। हिन्दी के अपने नियम कानून लागू होते हैं। हिन्दी में जो शुद्ध संस्कृत शब्द भी आते हैं, वह संस्कृत की नहीं

पं. रामकृष्ण वाजपेयी

हिन्दी की प्रजा हैं। आचार्य किशोरी दास बाजपेयी ने एक शिक्षक के रूप में पढ़ाते समय हिन्दी के तमाम नियमों का आविष्कार किया फिर हिन्दी निरुक्त पुस्तक में यास्क के नियमों का उन्होंने बड़े चमत्कारिक रूप से इस्तेमाल किया। उन्होंने हिन्दी की नब्ज को पहचाना। राष्ट्रभाषा का प्रथम व्याकरण लिखा जिसे हिन्दी का मूल व्याकरण भी कहा जाता है इसके बाद हिन्दी शब्दानुशासन जैसा ग्रंथ हिन्दी जगत को दिया। हिन्दी संसार की भाषाओं में एक विशिष्ट स्थान इसलिए रखती है क्योंकि इसका गठन एक सुनिश्चित वैज्ञानिक पद्धति पर हुआ। हिन्दी बहुत सरल शुद्ध और पूर्ण वैज्ञानिक भाषा है और इसीलिए बिना पढ़े भी लोग हिन्दी बोलने और समझने लगते हैं। सात-आठ सौ साल पहले मुसलमान बादशाहों ने हिन्दी को दिल्ली से कोलकाता, ढाका तक तथा गुजरात, महाराष्ट्र और दक्षिण भारत तक फैलाया। यह बात सही है लिखने में वे अपनी अभ्यस्त फारसी लिपि का इस्तेमाल करते थे और इसीलिए फारसी अरबी के शब्दों का भी प्रयोग करते थे। उसमें भी संज्ञा और कुछ विशेषण का इस्तेमाल। इसी कारण उस समय की सरकारी हिन्दी का नाम बाद में उर्दू पड़ गया। उस समय कि वह उर्दू हिन्दी ही थी। सरलता से सब कहीं चल पड़ी। यहां समझने की बात यह है कि अपने शासन को चलाने के लिए उस समय हिन्दी को उर्दू नाम दे दिया गया। लेकिन बाद में यह भेद इतना गहरा हुआ कि बाद में हिन्दी उर्दू के चलते देश का विभाजन तक हो गया। खैर जब हिन्दी का उर्दू नाम हो गया तो लोगों ने उर्दू को हिन्दी से अलग एक भाषा बना दिया और उस उर्दू को इतना कठिन कर दिया कि उसको लंबे समय तक पढ़ने के बाद उस समझ में आनी शुरू होती थी। हिन्दी को उस समय के कुछ उर्दू पसंद लोगों और कुछ संस्कृत प्रेमियों ने बिगाड़ा। यह भी काफी समय तक चला।

इसके बाद जब बंगाल में अंग्रेजी शासन का केंद्र कोलकाता बना तो कुछ अंग्रेज शिक्षा शास्त्रियों ने उर्दू की प्रकृति पर ध्यान दिया और विदेशी अनावश्यक शब्द हटाकर नागरी लिपि में हिन्दी की प्रतिष्ठित कराने का प्रयास किया । हिन्दी के विकृत रूप को नागरी लिपि में देखकर बंगाली नेताओं को प्रेरणा मिली कि यही भाषा संपूर्ण देश की राष्ट्रीय भाषा हो सकती है, उन्होंने खुलकर अपनी बात कही जिससे अंग्रेज राजनीतिज्ञों के कान खड़े हुए और उन्होंने विरोध स्वरूप हिन्दी की जगह हिन्दुस्तानी भाषा की हिमायत की।

इससे हिन्दी के तीन रूप हो गए हिन्दी, उर्दू और हिन्दुस्तानी। उधर जब फारसी लिपि के बंधन से छूट कर हिन्दी नागरी लिपि में आई तो फारसी, अरबी आदि के शब्दों की जगह संस्कृत शब्द उसमें आने लगे। कुछ उत्साही हिन्दी प्रेमियों ने संस्कृत के नियमों का अनुसरण करने की कोशिश शुरू कर दी जिससे हिन्दी का स्वरूप फिर बिगड़ने लगा। हिन्दी में समय के साथ अपना रूप निखार आता गया। यह बात सही है कि हिन्दी में संस्कृत का सिक्का चलता है लेकिन आदर के साथ। सूरज के साथ सूर्य भी चलता है। लेकिन सूर्य सिद्धांत लिखेंगे तो वहां सूरज सिद्धांत नहीं लिखा जा सकता। हर शब्द का अलग महत्व है। संस्कृत शब्द आवश्यकतानुसार हिन्दी में आते हैं लेकिन उसके लिए संस्कृत का व्याकरण हिन्दी में नहीं चलता है। इन सब की प्रकृति हिन्दी का व्याकरण निर्धारित करता है। हिन्दी के अपने नियम हैं। अपने अधिनियम हैं। इन्हीं के द्वारा सब काम चलता है। हिन्दी के नियम स्वयं हिन्दी के बनाए हुए हैं। अपने आप बने हैं किसी के बनाए हुए नहीं । कोई भी शासन या महा विद्वान अपने नियम बनाकर हिन्दी को उनके अनुसार नहीं चला सकता । हिन्दी एक स्वतंत्र और वैज्ञानिक भाषा है। यहां एक बात और उल्लेखनीय है कि स्वामी दयानंद सरस्वती, राजा राममोहन राय, लोकमान्य तिलक, महात्मा गांधी आदि वह महापुरुष थे जिन्हें हिन्दी भाषी नहीं कहा जा सकता, लेकिन उन्होंने हिन्दी की हिमायत की, हिन्दी को देश की सामान्य भाषा बनाने में योगदान दिया। बंगाल, गुजरात, महाराष्ट्र जैसे प्रदेशों ने सबसे पहले इधर ध्यान दिया, हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में ग्रहण करने पर बल दिया। कोलकाता के जस्टिस शारदा चरण ने यह आंदोलन शुरू किया था कि देश की सभी भाषाएं बांग्ला, उड़िया, गुजराती आदि नागरी लिपि में ही लिखी जाया करें जैसे कि यूरोप की विभिन्न भाषाएं रोमन लिपि में चलती हैं। यह आंदोलन जब शुरू हुआ तब हिन्दी की शुरुआती अवस्था थी। उस समय उन्होंने देवनागर नाम से मासिक पत्रिका निकाली जिसमें भारत की सभी भाषाओं के लेख नागरी लिपि में ही छपा करते थे। नागरी लिपि को सम्मान देने के लिए देवनागरी कहा जाता है आगे चलकर राजर्षि टंडन की तपस्या और जनता की मांग से हिन्दी राष्ट्रभाषा हुई, लेकिन अभी भी देश की एक लिपि का स्वप्न अधूरा है। लोग नागरी भी छोड़कर हिन्दी के लिए रोमन लिपि का इस्तेमाल कर रहे हैं जो कि हिन्दी प्रेमियों के लिए बड़ी चिंता का सबब होना चाहिए। अंत में यही कहेंगे कि हिन्दी के विकास में संस्कृत का योगदान है, लेकिन हिन्दी संस्कृत की चेरी नहीं अलग वजूद रखती है।

(लेखक, हिन्दी पाणिनि आचार्य किशोरीदास वाजपेयी जी के पौत्र हैं।)

-पं. रामकृष्ण वाजपेयी
67/105, रामनारायण की गली,
लखान, लखनऊ, उत्तर प्रदेश--226001

भारत की कुछ भाषाएं विलुप्त होने के कगार पर

भाषा किसी भी संस्कृति का महत्वपूर्ण अंग है, इसलिए अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर विलुप्त होती भाषाओं को लेकर जागरूकता के प्रयास जरूरी हैं । दुनिया भर में करीब 7,000 भाषाएं हैं भारत में अभी लगभग 450 जीवित भाषाएं हैं । देश की यह समृद्ध भाषाई विरासत गर्व करने लायक है, लेकिन चिंता की बात है कि हमारे देश की 10 भाषाएँ ऐसी हैं जिसके जानकार 100 से भी कम लोग बचे हैं । इन भाषाओं में ज्यादातर भाषाएँ मूल निवासियों द्वारा बोली जाती हैं, लेकिन ये भाषाएँ खतरनाक ढंग से विलुप्त होती जा रही हैं ।

वहीं 81 भारतीय भाषाओं की स्थिति बहुत अच्छी नहीं है जिसमें- मणिपुरी, बोडो, गढ़वाली, लद्दाखी, मिजो, शेरपा और स्पिति शामिल हैं । लेकिन ये सभी भाषाएँ अभी 'कमजोर' की श्रेणी में हैं । इनको बचाए रखने के लिए संगठित प्रयास करने की जरूरत है ।

दुनिया की खतरे में पड़ी भाषाओं के यूनेस्को एटलस के ऑनलाइन चौप्टर के मुताबिक भारत की 197 भाषाएँ ऐसी हैं जो असुरक्षित, लुप्तप्राय या विलुप्त हो चुकी हैं ।

विलुप्त हो रही भाषाओं में अहोम, एंड्रो, रंगकास, सेंगमई, तोलचा व अन्य शामिल हैं । ये सभी भाषाएँ हिमालयन बेल्ट में बोलीं जाती हैं ।

वहीं यूनेस्को के मुताबिक दुनिया की करीब 97 फीसदी आबादी इनमें से सिर्फ 4 फीसदी भाषाओं की जानकारी रखती है, जबकि दुनिया के केवल 3 फीसदी लोग बाकी के 96 फीसदी भाषाओं की जानकारी रखते हैं ।

सरलता, बोधगम्यता और शैली की दृष्टि से विश्व की भाषाओं में हिन्दी महानतम स्थान रखती है।

- अमरनाथ झा

पुराने गौरव की ओर लौट रही है प्राचीनतम भाषा संस्कृत

सुनील बादल

लंदन के सेंट जेम्स नामक कॉन्वेंट स्कूल के ब्रोशर में छपी पंक्तियाँ हैं- 'संस्कृत से छात्रों में प्रतिभा का विकास होता है। यह उनकी वैचारिक क्षमता को निखारती है, जो उनके बेहतर भविष्य के लिए सहायक है।' दुनिया के लगभग दो सौ विश्वविद्यालयों में संस्कृत पढ़ाई जाती है, वर्तमान में यह भाषा केवल साहित्य, दर्शन या अध्यात्म तक सीमित न रहकर गणित, विज्ञान, औषधि, चिकित्सा, इतिहास, मनोविज्ञान, भाषाविज्ञान जैसे विविध क्षेत्रों में भी अपनी जगह बना रही है। सदियों पहले जब मैक्स और मूलर नामक विद्वानों ने भारत के प्राचीनतम ग्रंथों का संस्कृत से जर्मन भाषा में वहां ले जाकर अनुवाद किया था तब शायद इस बात की गंभीरता किसी ने नहीं समझी थी कि वे क्या ले जा रहे हैं! उसके बाद विज्ञान के सूत्रों के अनेक शोध हुए और संभवत: यजुर्वेद तथा कुछ अन्य ग्रंथों में संचित चिकित्सा विज्ञान के सूत्रों के आधार पर चिकित्सा के क्षेत्र में तब सर्वाधिक नोबल पुरस्कार जर्मनी ने प्राप्त किए । आज भी गुलाम भारत के समय स्वार्थवश फैलाई गयी भ्रांतियों के कारण संस्कृत को प्राचीन ज्ञान की भाषा नहीं मानकर सिर्फ एक वर्ग विशेष की भाषा समझा जाता है । जबकि 2011 में बेंगलुरु में आयोजित विश्व संस्कृत पुस्तक मेले में 1 लाख से अधिक लोगों ने हिस्सा लिया, जो संस्कृत साहित्य के प्रति पाठकों के उत्साह को दिखाता है ।

याददाश्त को भी बेहतर बनाती है संस्कृत

शिक्षाविद पॉल मॉस के अनुसार संस्कृत मस्तिष्क को गति देती है। इससे सेरेब्रल कॉर्टेक्स सक्रिय होता है, जो सीखने की क्षमता, याददाश्त और निर्णय लेने की क्षमता को आश्चर्यजनक रूप से बढ़ाता है। कई रिसर्च में यह पाया गया कि जिन छात्रों की संस्कृत पर अच्छी पकड़ थी उन्होंने गणित और विज्ञान में भी अच्छा प्रदर्शन किया। वैज्ञानिकों का मानना है कि संस्कृत के तार्किक और लयबद्ध व्याकरण के चलते स्मरणशक्ति और एकाग्रता का विकास होता है। इसका ताजा उदाहरण है, गणित का नोबेल कहे जाने वाले सर्वोच्च सम्मान फील्ड्स मैडल के विजेता भारतीय मूल के गणितज्ञ मंजुल भार्गव, जो अपनी योग्यता का श्रेय संस्कृत भाषा को देते हैं जिसके तर्कपूर्ण व्याकरण ने उनके भीतर गणित की बारीकियों को समझने का तार्किक नजरिया विकसित किया।

विदेशों में इन क्षेत्रों में बना सकते हैं करियर

अपने देश में उपेक्षा के कारण अनेक संस्कृत के विद्वानों को अन्य कार्यों में अपने बच्चों को बेहतर भविष्य तलाशने को कहा जा रहा हो पर देश के साथ ही ऑक्सफोर्ड, कैम्ब्रिज और कोलंबिया जैसे प्रतिष्ठित विदेशी विश्वविद्यालय भी संस्कृत विशेषज्ञों को अध्यापन का अवसर देते हैं। केंद्रीय विद्यालयों में संस्कृत को तृतीय भाषा बनाने के फैसले से विद्यालय स्तर पर संस्कृत अध्यापन में करियर के अवसर बढ़ गए हैं। प्राचीन सभ्यता और भारत के अध्यात्म तथा दर्शन से जुड़ी प्रामाणिक जानकारी के लिए संस्कृत भाषा जानना आवश्यक है । इसीलिए भाषाओं में शोध के लिहाज से संस्कृत दुनिया भर में पहले पायदान पर है। भाषा विज्ञान, इतिहास और मेडिसिन के साथ ही आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस और कम्प्यूटिंग क्षेत्र में भी संस्कृत के प्रयोग की संभावनाओं पर दुनिया भर में शोध जारी है। भारत के साथ ही जर्मनी, इंग्लैंड, फ्रांस, अमेरिका, जापान और ऑस्ट्रेलिया के प्रतिष्ठित संस्थानों और विश्वविद्यालयों से भी बतौर रिसर्च स्कॉलर जुड़ सकते हैं। संस्कृत में स्नातक या शास्त्री की उपाधि के साथ भारतीय सेना में धर्मगुरु के पद के लिए आवेदन कर सकते हैं। हर्बल कॉस्मेटिक बूम और आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति के प्रचलन से संस्कृत के छात्रों के लिए करियर संभावनाओं के नए रास्ते खुले हैं। आयुर्वेद पद्धतियों का ज्ञान संस्कृत में लिपिबद्ध होने के कारण सभी आयुर्वेदिक फार्मेसी और कॉस्मेटिक कंपनियां संस्कृत के छात्रों को नियुक्त करती हैं। भारतीय अध्यात्म, दर्शन और योग पर आधारित प्राचीन ग्रंथ संस्कृत भाषा मे मौजूद हैं इसलिए इस क्षेत्र में काम करने वाले सभी संस्थान संस्कृत भाषा विशेषज्ञों को विदेशों तक में रोजगार के अच्छे अवसर मुहैया कराते हैं। संस्कृत में उच्चारण क्षमता अच्छी होने पर आकाशवाणी, रेडियो या दूरदर्शन पर संस्कृत न्यूज रीडर के रूप में काम कर सकते हैं या संस्कृत नाटकों और संस्कृत श्लोकों की रिकॉर्डिंग के लिए वॉइस आर्टिस्ट का काम भी कर सकते हैं। भारत, अमेरिका, जर्मनी और ब्रिटेन में कई संस्कृत पत्रिकाओं का प्रकाशन होता है जिनमें लेखक, अनुवादक या पत्रकार के तौर पर करियर बना सकते हैं। संस्कृत साहित्य प्रकाशन संस्थानों में भी काम किया जा सकता है। अपनी सुस्पष्ट और छंदात्मक उच्चारण प्रणाली के चलते संस्कृत भाषा को स्पीच थैरेपी टूल के रूप में मान्यता मिल रही है।

भारत के प्रमुख शिक्षण संस्थान

राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान, दिल्ली, लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ, जगद्गुरु रामानंदाचार्य राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय, जयपुर, राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ, तिरुपति, संपूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी ।

आचार्य रामधारी सिंह दिनकर ने अपनी चर्चित पुस्तक 'संस्कृति के चार अध्याय' में चर्चा की है कि संस्कृत के अनेक शब्द अंग्रेजी तथा विश्व की अन्य भाषाओं में अपभ्रंश के रूप में शामिल हो गए हैं । संस्कृत के राल्योभेद: नियम के अनुसार र को ल और ल

को र उच्चारित किया जाता है यही रीति तमिल में भी है । भाषा वैज्ञानिक कोल्ड्वेल एवं सुनीति कुमार चटर्जी ने तथा तमिल-अंग्रेजी शब्दकोश के रचयिता किटेल ने उदाहरण देकर बताया है कि तमिल और संस्कृत के शब्दों का आदान-प्रदान हुआ है। संस्कृत के इस महत्व को ध्यान में रखकर लंदन के सबसे बड़े स्कूलों में से एक सेंट जेम्स कान्वेंट स्कूल में,बच्चों का द्वितीयक भाषा के रूप में संस्कृत सीखना अनिवार्य है। भारत से विशेष तौर पर वहाँ संस्कृत के शिक्षकों की व्यवस्था की जाती है । ब्रिटिश शिक्षाविद डॉ. विल डुरंट के अनुसार "संस्कृत आधुनिक भाषाओं की जननी है। संस्कृत बच्चों के सर्वांगीण बोध ज्ञान को विकसित करने में मदद करती है।"

जर्मन शिक्षाविद् पॉल मॉस के अनुसार "संस्कृत से सेरेब्रेल कॉर्टेक्स सक्रिय होता है। अतएव किसी बालक के लिए उँगलियों और जुबान की कठोरता से मुक्ति पाने के लिए देवनागरी लिपि व संस्कृत बोली ही सर्वोत्तम मार्ग है। वर्तमान यूरोपीय भाषाएँ बोलते समय जीभ और मुँह के कई हिस्सों का और लिखते समय उँगलियों की कई हलचलों का इस्तेमाल नहीं किया जाता है ।"

साल 2007 में राष्ट्रपति के रूप में अपने कार्यकाल के दौरान डॉ. अब्दुल कलाम यूनान गए थे। वहाँ के आधिकारिक स्वागत कार्यक्रम में ग्रीस के प्रेजीडेंट कार्लोस पाम्पाडलीस ने डॉ. कलाम के लिए "राष्ट्रपति महाभाग सुस्वागतं यवनदेशे", इस संस्कृत वाक्य से अपने भाषण का प्रारंभ किया। उन्होंने अपने उद्बोधन में संस्कृत का प्राचीन भारत और ग्रीक भाषा के सम्बन्ध के बारे में व्यापक प्रकाश डाला। वैज्ञानिक कई दिनों तक ऐसी भाषा/लिपि के विकास में थे, जिसका संगणकीय प्रणाली में उपयोग कर, उसका संसार की किसी भी आठ भाषाओं मे उसी क्षण रूपांतर हो जाए। अंततोगत्वा 'संस्कृत' ही एकमात्र ऐसी भाषा नजर आई। फोर्ब्स पत्रिका 1985 के अंक के अनुसार दुनिया में अनुवाद के उद्देश्य के लिए उपलब्ध सबसे अच्छी भाषा संस्कृत है।

संस्कृत ही संसार की सर्वोत्तम भाषा है, जो संगणकीय प्रणाली के लिए उपयुक्त है। नासा की एक आधिकारिक रिपोर्ट के मुताबिक अमेरिका 6 और 7 वीं पीढ़ी के सुपर कंप्यूटर संस्कृत भाषा पर आधारित बना रहा है जिससे सुपर कंप्यूटर की अधिकतम सीमा तक उपयोग किया जा सके। परियोजना की समय सीमा 2025 (6 पीढ़ी के लिए) और 2034 (7 वीं पीढ़ी के लिए) है, इसके बाद दुनिया भर में संस्कृत सीखने के लिए एक भाषा क्रांति होगी। अमेरिका, रूस, स्वीडन, जर्मनी, ब्रिटेन, फ्रांस, और जापान जैसे बेहद तकनीकि पूर्ण देश वर्तमान में भरतनाट्यम और नटराज के महत्व के बारे में शोध कर रहे हैं। गौरतलब है कि नटराज शिव जी का कॉस्मिक नृत्य है। जिनेवा में संयुक्त राष्ट्र कार्यालय के सामने शिव या नटराज की एक मूर्ति है । इसी तरह ब्रिटेन वर्तमान में हमारे श्री चक्र पर आधारित एक रक्षा प्रणाली पर शोध कर रहा है। संस्कृत भाषा वर्तमान में "उन्नत किर्लियन फोटोग्राफी" तकनीक में इस्तेमाल की जा रही है। वर्तमान में, उन्नत किर्लियन फोटोग्राफी तकनीक सिर्फ रूस और संयुक्त राज्य अमेरिका में ही मौजूद हैं। भारत के पास आज "सरल किर्लियन फोटोग्राफी" भी नहीं है । संस्कृत भाषा का व्याकरण अत्यंत परिमार्जित एवं वैज्ञानिक है। भारतीय वैज्ञानिकों को नव अनुसंधान की प्रेरणा संस्कृत से मिली । जगदीश चन्द्र बसु, चंद्रशेखर वेंकट रमण, आचार्य प्रफुल्लचन्द्र राय, डॉ. मेघनाद साहा जैसे विश्वविख्यात वैज्ञानिकों को संस्कृत भाषा से अत्यधिक प्रेम था और वैज्ञानिक खोजों के लिए वे संस्कृत को ही आधार मानते थे। इनके अनुसार संस्कृत का प्रत्येक शब्द वैज्ञानिकों को अनुसंधान के लिए प्रेरित करता है। प्राचीन ऋषि-महर्षियों ने विज्ञान में जितनी उन्नति की थी, वर्तमान में उसका कोई मुकाबला नहीं कर सकता। महर्षियों का सम्पूर्ण ज्ञान एवं सार संस्कृत भाषा में निहित है। आचार्य प्रफुल्ल चन्द्र राय विज्ञान के लिए संस्कृत शिक्षा को आवश्यक मानते थे। जगदीशचन्द्र बसु ने अपने अनुसंधानों के स्रोत संस्कृत में खोजे थे। डॉ. साहा अपने घर के बच्चों की शिक्षा संस्कृत में ही कराते थे और एक वैज्ञानिक होने के बावजूद काफी समय तक वे स्वयं बच्चों को संस्कृत पढ़ाते थे। आधुनिक विज्ञान सृष्टि के रहस्यों को सुलझाने में बौना पड़ रहा है। अलौकिक शक्तियों से सम्पन्न मंत्र-विज्ञान की महिमा से विज्ञान आज भी अनभिज्ञ है। उड़न तश्तरियाँ कहाँ से आती हैं और कहाँ गायब हो जाती हैं इस प्रकार की कई बातें हैं जो आज भी विज्ञान के लिए रहस्य बनी हुई हैं। प्राचीन संस्कृत ग्रंथों से ऐसे कई रहस्यों को सुलझाया जा सकता है। विमान विज्ञान, नौका विज्ञान से संबंधित कई महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त हमारे ग्रंथों से प्राप्त हुए हैं। इस प्रकार के और भी अनगिनत सूत्र हमारे ग्रंथों में समाये हुए हैं, जिनसे आधुनिक विज्ञान को अनुसंधान के क्षेत्र में महत्वपूर्ण दिशानिर्देश मिल सकते हैं। आज अगर विज्ञान के साथ संस्कृत का समन्वय कर दिया जाय तो अनुसंधान के क्षेत्र में बहुत उन्नति हो सकती है। हिन्दू धर्म के प्राचीन महान ग्रंथों के अलावा बौद्ध, जैन आदि धर्मों के अनेक मूल धार्मिक ग्रंथ भी संस्कृत में ही हैं।

संस्कारी जीवन की नींवः

संस्कृत वर्तमान समय में भौतिक सुख-सुविधाओं का अम्बार होने के बावजूद भी मानव-समाज अवसाद, तनाव, चिंता और अनेक प्रकार की बीमारियों से ग्रस्त है क्योंकि केवल भौतिक उन्नति से मानव का सर्वांगीण विकास सम्भव नहीं है, इसके लिए आध्यात्मिक उन्नति अत्यंत जरूरी है। जिस समय संस्कृत का बोलबाला था उस समय मानव-जीवन ज्यादा संस्कारित था। यदि समाज को फिर से वैसा संस्कारित करना हो तो हमें फिर से सनातन धर्म के प्राचीन संस्कृत ग्रंथों का सहारा लेना ही पड़ेगा। कहते हैं कि किसी देश की

शेष पृष्ठ संख्या 33 पर

हिन्दी की गौरवपूर्ण स्थिति

प्रो. शरद नारायण खरे

भारत और विदेशों में हिन्दी बोलने वाले लोगों की संख्या करीब 500 मिलियन है। यही नहीं हिन्दी भाषा को अच्छी तरह समझने वाले लोगों की संख्या करीब 900 मिलियन है। सभी भाषाओं का स्वयं का अपना स्वरूप है जिनकी जड़ें किसी न किसी भाषा से जुड़ी हुई हैं। इसी तरह हिन्दी भाषा का जन्म शास्त्रीय संस्कृत भाषा से हुआ है। हिन्दी की अधिकतर शब्दावली संस्कृत से व्युतपन्न है। भारत के संविधान के अनुच्छेद 343 (1) के द्वारा देवनागरी लिपि में हिन्दी को संघ की आधिकारिक भाषा के रूप में मान्यता प्रदान की गई है। भारतीय संविधान के आठवीं अनुसूची की बाईस भाषाओं में से एक हिन्दी है। भारत के संविधान ने सरकारी कार्यप्रणाली के लिए दो भाषाओं को मान्यता प्रदान की है जिसमें पहली हिन्दी और दूसरी भाषा अंग्रेजी है। स्वतंत्रता प्राप्त के बाद यह निश्चित किया गया था कि सन् 1965 से भारत की पूरी कार्यप्रणाली हिन्दी भाषा में संपादित होगी और अनुच्छेद 344 (2) और अनुच्छेद 351 के निर्देशों के अनुसार राज्यों को अपनी भाषा के चयन का अधिकार होगा, लेकिन आधिकारिक भाषा अधिनियम 1963 के तहत सभी आधिकारिक उद्देश्यों के लिए अंग्रेजी का भी प्रयोग में लाने का निश्चय किया गया। यही कारण है कि अंग्रेजी आज भी आधिकारिक दस्तावेजों, अदालतों आदि में प्रयोग की जाती है। भारत के कई राज्यों में हिन्दी को आधिकारिक भाषा के रूप में मान्यता मिली हुई है। ऐसे राज्य हैं-बिहार, झारखंड, उत्तराखंड, मध्य प्रदेश, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, छत्तीसगढ़, हिमाचल प्रदेश, हरियाणा और दिल्ली आदि। इसके साथ ही इन राज्यों की अपनी एक सह-सरकारी भाषा भी है, जैसे उत्तर प्रदेश में उर्दू एक सरकारी भाषा है तो कई अन्य राज्यों में हिन्दी को सह-सरकारी भाषा का दर्जा दिया गया है ।

हिन्दी एक वैश्विक भाषा

अच्छी बात यह है कि विदेशों में रहने वाले भारतीयों के बीच भारतीय संस्कृति व भाषा सीखने की रुचि बढ़ी है। यही कारण है कि कई विदेशी देशों ने भारतीय अध्ययनों को बढ़ावा देने के लिए अपने यहां हिन्दी सीखने के लिए अध्ययन केंद्र स्थापित किए हैं। इन संस्थानों में भारतीय धर्म, इतिहास और संस्कृति पर पाठ्यक्रम उपलब्ध कराने के साथ-साथ हिन्दी, उर्दू और संस्कृत जैसे कई भारतीय भाषाओं की शिक्षा भी प्रदान की जाती हैं। वर्तमान के वैश्वीकरण और निजीकरण के समय में अन्य देशों के साथ भारत के बढ़ते व्यापारिक संबंधों ने दूसरे देशों की भाषाओं को सीखने की आवश्यकता को और भी अधिक बढ़ा दिया है।

एक-दूसरे देश के साथ सहयोग एवं विकास की भावना के कारण हिन्दी की लोकप्रियता अन्य देशों में बहुत अधिक बढ़ी है। इसका सबसे अच्छा उदाहरण अमेरिका के कुछ स्कूलों ने फ्रेंच, स्पैनिश और जर्मन के साथ एक विदेशी भाषा के रूप में हिन्दी को शुरू करने का फैसला लिया है। इससे भी हिन्दी को वैश्विक पहचान मिली है।

तकनीकी भाषा के रूप में हिन्दी

भारतीय भाषा हिन्दी के तकनीकी भाषा के रूप में विकास की शुरुआत 1991 में स्थापित इलेक्ट्रॉनिक्स विभाग मिशन (टी.डी. आई.एल.) के साथ शुरू हुई। भारतीय भाषाओं की समृद्धि को देखते हुए इसे मिशन मानते हुए कई गतिविधियां शुरू की गईं। इसके बाद 1991 में यह निश्चित किया गया कि संवैधानिक रूप से हिन्दी सहित प्रत्येक स्वीकृत भाषाओं के लिए तीन मिलियन शब्द का संग्रह विकसित किया जाएगा। इसके बाद हिन्दी कॉरपोरेशन का विकास आई.आई.टी. दिल्ली को सौंपा गया।

1981-1991 के दौरान हिन्दी कॉरपोरा से संबंधित स्रोत किताबों, पत्रिकाओं, पत्रिकाएं, समाचार पत्र और सरकारी दस्तावेजों में प्रकाशित किए गए थे। इसे छह मुख्य श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है, जिनमें सामाजिक विज्ञान, भौतिक-व्यावसायिक विज्ञान, सौंदर्यशास्त्र, प्राकृतिक विज्ञान, वाणिज्य, आधिकारिक और मीडिया भाषा और अनुवादित सामग्री शामिल हैं। शब्द स्तरीय टैगिंग के लिए सॉफ्टवेयर उपकरण, शब्द गणना, पत्र गणना, आवृत्ति गणना भी विकसित की गई हैं। विभिन्न संस्थानों द्वारा हिन्दी में पठनीय मशीन के लगभग 30 लाख शब्द विकसित किए गए हैं। हिन्दी के विकास में हिन्दी वर्ड प्रोसेसर की भी बहुमूल्य भूमिका है। कई संस्थानों ने हिन्दी वर्ड प्रोसेसर का निर्माण कर हिन्दी के विकास को गति प्रदान की है। इसके साथ-साथ 1991 में सरकार द्वारा जी.आई.एस.टी., शेलिपी, सुलीपी, ए.पी.एस., अक्षर विकास कार्यक्रम के तहत कई संस्थानों (सिद्धार्थ 1983 में डी.सी.एम.), लिपी (हिन्दीट्रौनिक्स 1983), आई.एस.एम., लिप ऑफिस (सी.डी.ए.सी., पुणे) के साथ कई अन्य संस्थानों ने भी हिन्दी वर्ड प्रोसेसर का भी निर्माण किया है। पुणे स्थित सी.डी.ए.सी. संस्थान ने जी.आई.एस.टी. प्रौद्योगिकी की शुरुआत की, ताकि सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भारतीय भाषाओं का प्रयोग किया जा सके। यह इनफॉर्मेशन इंटरचेंज, स्कीन पर उसका प्रदर्शन एवं विशेष फोंट (आई.एस.एफ.ओ.सी.) के लिए भारतीय स्क्रिप्ट कोड का प्रयोग करता है। इसके साथ ही यह विभिन्न स्क्रिप्ट्स (आई.एन.एस.सी.आर.आई.पी.टी.) आदि के लिए

हिन्दी भाषा में नौकरी या व्यवसाय के अवसर

विश्व भर में जिस तरह हिन्दी की लोकप्रियता बढ़ती जा रही है उसी तरह हिन्दी भाषा के क्षेत्र में रोजगार के अवसर भी बढ़ते जा रहे हैं। केंद्र सरकार के विभिन्न विभाग, राज्य सरकारों (हिन्दी भाषी राज्यों) के विभिन्न विभागों में हिन्दी भाषा में काम करना अनिवार्य हो गया है। इसके अतिरिक्त विभिन्न विभागों और केंद्रीय / राज्य सरकारों की इकाइयों में हिन्दी अधिकारी, हिन्दी अनुवादक, हिन्दी सहायक, प्रबंधक (आधिकारिक भाषा) जैसे कई पद होते हैं, जहां नियुक्तियां की जाती हैं। निजी टीवी और रेडियो चैनलों के आगमन और स्थापित पत्रिकाओं / समाचार पत्रों के हिन्दी संस्करणों के विकास के कारण इन क्षेत्रों में भी नौकरियों के अवसर में कई गुना बढ़ौतरी हुई है। हिन्दी पत्रकारिता के क्षेत्र में संपादकों, पत्रकारों, संवाददाताओं, उप संपादक, प्रूफ रीडर, रेडियो जॉकी, एंकर आदि की आवश्यकता होती हैं, इन लोगों का अधिकांश कार्य भी हिन्दी में ही होता है। हिन्दी में शैक्षणिक योग्यता रखने के साथ-साथ पत्रकारिता / जनसंचार में डिग्री / डिप्लोमा की योग्यता के साथ अभ्यर्थी एक से अधिक स्थानों पर नौकरी का अवसर पा सकते हैं। इसके अतिरिक्त अभ्यर्थी रेडियो / टीवी / सिनेमा के क्षेत्र में स्क्रिप्ट लेखक / संवाद लेखक / गीतकार के रूप में उपलब्ध अवसर का लाभ उठा सकते हैं। इन क्षेत्रों में रचनात्मक, कलात्मक लेखन की मांग होती है जो अभ्यर्थी इन क्षेत्रों की डिग्री या डिप्लोमा हासिल कर स्वयं में विकसित कर सकते हैं।

इसके साथ ही प्रख्यात अंतर्राष्ट्रीय लेखक, जो अंग्रेजी या अन्य विदेशी भाषाओं में अपने लेख लिखते हैं उन लेखों का अनुवाद भी हिन्दी में किया जा सकता है। हिन्दी / अंग्रेजी में फिल्मों / विज्ञापनों की लिपियों का अनुवाद भी ऐसा ही कार्य है। इसी तरह द्विभाषी दक्षता रखकर कोई भी फ्रीलान्स अनुवादक के रूप में अपनी आजीविका अर्जित कर सकता है और अपनी अनुवाद कंपनियां भी स्थापित कर सकता है। ऐसी कंपनियां अनुबंध के आधार पर काम करती हैं और कई पेशेवर अनुवादकों को रोजगार प्रदान करती हैं। विदेशी एजेंसियों के पास अनुवाद परियोजनाओं के बहुत से अवसर उपलब्ध होते हैं। यह काम आसानी से इंटरनेट के माध्यम से किया जा सकता है। पूरी दुनिया में सीस्ट्रान, एस.डी.एल. इंटरनेशनल, डेट्रॉइट ट्रांसलेशन ब्यूरो, प्रोज इत्यादि कई कंपनियां कई भाषाओं में अनेक सेवाएं उपलब्ध कराती हैं, जिनमें से एक भाषा हिन्दी है। अन्य कंपनियां इन कंपनियों से अनुबंध के आधार पर भाषा सेवाएं मांगती हैं। आमतौर पर इन कंपनियों में कैरियर के अवसर स्थायी या फ्रीलांस अनुवादकों और दुभाषियों के रूप में उपलब्ध होते हैं।

हमने यह भी देखा है कि वैश्विक स्तर पर प्रकाशित की जाने वाली किताबों के प्रकाशक भी हिन्दी भाषी लोगों के बीच पैठ बनाने की कोशिश कर रहे हैं । आश्चर्यजनक बात तो यह है कि प्रमुख बहु-राष्ट्रीय प्रकाशन संस्थानों ने न सिर्फ हिन्दी भाषा में किताबों का प्रकाशन करना शुरू किया है बल्कि पुरानी और लोकप्रिय किताबों का बड़े पैमाने पर हिन्दी अनुवादित कर प्रकाशित भी किया है। इसलिए बड़े प्रकाशन संस्थानों में अनुवादक, संपादक और संगीतकार के रूप में एक बहुत अवसर मौजूद होते हैं।

हिन्दी भाषा में स्नातकोत्तर की योग्यता रखने वाले लोगों को विदेशों में भी नौकरी का अवसर मिल सकता है। खासकर उन लोगों ने जिन्होंने अपनी पी.एच.डी पूरी कर ली है । विदेशों के विश्वविद्यालयों में हिन्दी पढ़ाना या विदेशी भाषाओं के साथ-साथ दूसरी भाषा के रूप में हिन्दी को पढ़ाकर अभ्यर्थी आजीविका चला सकते हैं। भारत के विद्यालयों, कॉलेजों और विश्वविद्यालयों में एक शिक्षक और प्रोफेसर के रूप में हिन्दी पढ़ाने का कार्य शुरू से चल ही रहा है, जो कि अत्यंत संतोष व हर्ष का विषय है ।

हिन्दी है गौरवमयी, हिन्दी है सम्पन्न ।
है हिन्दी से दूर जो, पतन रहे आसन्न ॥

-प्रो. शरद नारायण खरे
विभागाध्यक्ष इतिहास, शासकीय जेएमसी महिला महाविद्यालय
मंडला (म.प्र.)-481661

पृष्ठ संख्या 33 का शेष

जाति, संस्कृति, धर्म और इतिहास को नष्ट करना है तो उसकी भाषा को सबसे पहले नष्ट किया जाए। मात्र 3,000 वर्ष पूर्व तक भारत में संस्कृत बोली जाती थी तभी तो ईसा से 500 वर्ष पूर्व पाणिनि ने दुनिया का पहला व्याकरण ग्रंथ लिखा था, जो संस्कृत का था। इसका नाम 'अष्टाध्यायी' है। 1100 ईस्वी तक संस्कृत समस्त भारत की राजभाषा के रूप से जोड़ने की प्रमुख कड़ी थी। अरबों और अंग्रेजों ने सबसे पहले ही इसी भाषा को खत्म किया और भारत पर अरबी और रोमन लिपि और भाषा को लादा गया। भारत की कई भाषाओं की लिपि देवनागरी थी लेकिन उसे बदलकर अरबी कर दिया गया, तो कुछ को नष्ट ही कर दिया गया। वर्तमान में हिन्दी की लिपि को रोमन में बदलने का छद्म कार्य शुरू हो चुका है, जो चिंतनीय है । (लेखक साहित्य और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया से जुड़े हैं ।)

-सुनील बादल
126 रतनलाल कॉप्लेक्स,
रातू रोड, रांची, झारखंड-834001

संस्कृत भाषा का महत्व और हिन्दी भाषा साहित्य में संस्कृत का योगदान

सुरेखा शर्मा

भारत के भाषायी इतिहास का चक्र तीन हजार वर्षों से चला आ रहा है । संस्कृत भाषा का साहित्य में समावेश आठ सौ वर्ष पूर्व ईसा हो चुका था। इस भाषायी इतिहास का दस्तावेजी प्रमाण 'ऋग्वेद' है जिसका लेखन युग एक हजार वर्ष पूर्व ईसा है। वह भाषा जिसे आर्य पहली बार भारत में लाए थे आज भी ऋग्वेद के रूप में विद्यमान है । स्वयं ऋग्वेद की भाषा उस प्राचीन भाषा की विकसित छवि है। ऋग्वेद में प्रयोग होने वाली भाषा सदा बदलाव के बहाव में रही है। ईसा से चार सौ वर्ष पूर्व व्याकरणदाता पाणिनि ने ऐसा अनुभव किया कि इस भाषा को बोलचाल की सतह पर आगे होनेवाले बदलाव से बचाकर रखना अति आवश्यक है अन्यथा यह अपनी पहचान खो देगी। पाणिनि ने ऋग्वेद का व्याकरण लिखकर उसे संपूर्ण जीवनदान देने की कोशिश की । व्याकरण की जंजीर बनी इस भाषा का आवश्यकतानुसार प्रयोग किया जाने लगा । भारत में धार्मिक भाषा होने के कारण संस्कृत हिन्दी साहित्य में भी अपना अलग योगदान देती रही है। संस्कृत आज भी हिन्दू समाज में सम्मान की दृष्टि से देखी जाती है और इसे देववाणी का दर्जा भी दिया गया है । धार्मिक दृष्टिकोण से अलग इस भाषा में विद्या एवं वेद का वैभव समाहित है । इसी वैभव की खोज ने कई विदेशी विद्वानों को इसे सीखने पर मजबूर किया । ईरान के 'सासानी' और हिन्दुस्तान के गुप्तशाही परिवारों के बीच सांस्कृतिक मेल-जोल कायम रखने के बाद दर्शनशास्त्र तथा तर्कशास्त्र जैसे विषयों पर संस्कृत भाषा में लिखी हुई पुस्तकों एवं संस्कृत की कथाओं व लघुकथाओं का पहलवी जुबान अनुवादों का एक लंबा सिलसिला चल पड़ा था । नौशेरवा के युग में पंचतंत्र को पहलवी जुबान में अनुवाद किया गया। नौशेरवा के युग में अनुवाद का काम बहुत तेजी से जारी रहा। संस्कृत से अनुवाद के लिए कुछ हिन्दी विद्वानों ने भी सहायता की। संस्कृत की शिक्षा लेने के लिए एक विदेशी आल्मिअबु लमआशर फलकी हिन्दुस्तान आया और हिन्दुस्तान में दस वर्षों के दौरान उसने हिन्दुओं की विधाओं पर एक मोटी पुस्तक तैयार की। हिन्दुस्तान के वह मुस्लिम बादशाह जिन्होंने संस्कृत भाषा व साहित्य के विकास में गहरी रुचि ली थी उनमें 'फिरोजशाह तुगलक' वाली ए कश्मीर सुल्तान, जैनुल आबेदीन और शहंशाह अकबर के नाम विशेष हैं। इस दौर में संस्कृत की धार्मिक एवं साहित्यिक पुस्तकें हिन्दी में व फारसी में लिखी गयी। यहाँ तक कि अमीर खुसरों ने भी संस्कृत की तारीफ की और अपनी फारसी शायरी में संस्कृत के शब्दों का भी उपयोग किया है। संस्कृत को 'दरी' भाषा से बेहतर बताया है।

हिन्दी की सभी आंचलिक बोलियों का साहित्य ही हिन्दी भाषा का श्रृंगार है। इसी के द्वारा हिन्दी के शब्द भंडार की अभिवृद्धि हुई है । विश्व भाषाओं में हिन्दी का स्थान अग्रणी भाषाओं में लिया जाता है । लोकभाषाओं से निर्मित हिन्दी एक हजार वर्षों से भी अधिक वर्षों से भारत की संपर्क भाषा और जनभाषा है । भाषा को संस्कृति की संवाहिका कहा जाता है । भाषा का संबंध व्यक्ति की आस्था, उसके विश्वास, उसके समग्र परिवेश से होता है । कोई भी भाषा अपने साथ अपने समय और समाज की संपूर्ण संस्कृति लेकर चलती है । भाषा से हमारी पहचान बनती है फिर वह किसी भी देश की भाषा हो। हिन्दी को लेकर आज हम जिस समय और समाज में हैं, वह भाषा को लेकर कई तरह की मानसिकता में जी रहा है। रहन-सहन, संस्कार, व्यवहार देश की भाषाओं का लेकिन जबान पर अंग्रेजी का बोलबाला । हिन्दी भाषी लोगों को आज भी अपने देश और विदेशों में दोयम दर्जे की नागरिकता और स्थिति का सामना करना पड़ता है । यह अधपढ़ और अज्ञानी और असंभ्रांत लोगों की भाषा बनी हुई है । जबकि संस्कृत इसकी जननी है। जिसने विश्व को सभ्यता, संस्कृति और ज्ञान का पाठ पढ़ाया है। किसी कवि ने उचित ही कहा है-

हिन्दुस्तान है देश हमारा, हिन्दी इसकी शान है ।
संस्कृत की ये प्यारी बेटी, हम सब की पहचान है ।

संस्कृत भारत की मूल भाषा रही है। हिन्दी के साथ-साथ बंगला, तमिल तथा अन्य भारतीय भाषाओं में लगभग 60 प्रतिशत शब्द संस्कृत के तत्सम रूप में पाए जाते हैं। अतः भिन्न होते हुए भी पूर्णतः पृथक नहीं हैं। दुनिया को सर्वप्रथम 'आर्य' नाम 'आर्य' जाति व 'आर्य' संस्कृति का ज्ञान भारत से ही हुआ है । भारत की प्राचीन भाषाओं और संस्कृत के अध्ययन ने 19वीं शताब्दी में पाश्चात्य विद्वानों की आँखें खोली और उन्हें पाश्चात्य भाषा व संस्कृति पर आर्यत्व की छाप का आभास कराया । विद्वानों ने अतुलनीय भाषा-शास्त्र को जन्म दिया । भारत के वेदों को विशेषतया ऋग्वेद को पढ़कर ही विद्वान पाश्चात्य आर्यों के स्वरूप व संस्कृति को समझ पाए। काबुल और मिस्र आदि के प्राचीन लेखों में पाए गए इन्द्र, वरुण, अग्नि, नासत्य आदि देवताओं वदुसन्त, अर्ततम, सुवरदन्त आदि राजाओं के आर्यत्व को भी विद्वानों ने भारत की सहायता से ही समझा व पहचाना । आर्य शब्द जातिवाचक न होकर पूर्णरूपेण सांस्कृतिक है। ऋग्वेद व संस्कृत भाषा की सहायता से जिन सुसभ्य और सुसंस्कृत आर्य लोगों के संबंध में विचार किया जाता है वे भारत के ही हैं। आर्य संस्कृति

भारत की ही देन है। सामान्यत: संस्कृत व संस्कृति की जब बात की जाती है तो तब एक गौरव का भाव हमारे मन में आता है। इस गौरव के बोध में भाषा अस्मिता व जातीय अस्मिता के रूप में सक्रिय होने के कारण एक तरह की विशुद्ध सार्थकता एवं संतोष की अनुभूति होती है । संस्कृति शब्द संस्कृत भाषा में 'सम' उपसर्ग कृ धातु से शक्ति प्रत्यय लगाने पर निष्पन्न होता है। संस्कृत भाषा के इस शब्द का अर्थ है संस्कार निखारना। भारतीय संस्कृति का यह समन्वित रूप संस्कृत भाषा के माध्यम से रामायण, महाभारत, गीता, कालिदास, भवभूति, भास के काव्यों और नाटकों के माध्यम से बार-बार व्यक्त हुआ है। गेटे ने 'शाकुंतलम' को पढ़कर उल्लसित मनोभाव में कहा था उसमें स्वर्ग और धरा का उदात्त सम्मिलन है, यह समूची भारतीय संस्कृति और साहित्य के संबध में कहा जा सकता है । भारतीय प्राचीन संस्कृति का एक समादेशक सामाजिक रूप वहाँ भी मिलता है जहाँ नाट्य को नाट्यवाद कहकर सबके लिए खुला रखा। संस्कृत साहित्य का विपुल भंडार है संस्कृत साहित्य में सांस्कृतिक स्थिति का परिमार्जन और सौष्ठवयुक्त रूप संस्कृत भाषा और प्राकृत भाषाओं के माध्यम से प्रकट हुआ। यह धरोहर के रूप में हिन्दी साहित्य को प्राप्त हुआ । हिन्दी के आदिकाल और मध्यकाल का स्वरूप देखा जाए तो सांस्कृतिक दृष्टि से आमूलचूल परिवर्तन दृष्टिगत नहीं होता । यह आक्रमण इस्लाम धर्म को अपने साथ लेता आया। इससे हमारी संस्कृति में कुछ बदलाव अवश्य आया। हमारी सामासिक सांस्कृतिक पर इससे कुछ अच्छे और कुछ बुरे प्रभाव भी पड़े। ध्यान देने योग्य बात यह है कि हिन्दी का साहित्य भी प्राकृत अपभ्रंश का दामन छोड़कर अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व इसी समय ग्रहण कर रहा था । राजनीतिक स्थितियां चाहे जैसी रही हों इन महाकवियों के काव्य में भारतीय सामासिक संस्कृति का उज्ज्वल अंश प्रकट हो रहा था । साहित्य सत्य के साथ शिव और सौंदर्य का भी समन्वय करता है। सांस्कृतिक मूल्य संस्कृत और हिन्दी साहित्य में प्रकट होते हैं। एक छोर पर इस्लाम की आक्रामकता कबीर के माध्यम से धार्मिक रूढ़ियों पर प्रहार कर रही थी और सिख धर्म के माध्यम से वीर धर्म की तलाश कर रही थी तो दूसरे छोर पर समाज से कटकर रहने वाले योगियों, नाथपंथियों और सिद्धों की अतिवादिता की तीव्र धार को सूर की माधुर्य भक्ति कुंठित कर रही थी और इन सबके बीच महाकवि तुलसीदास की प्रज्ञा-विराट समन्वय का प्रयास कर रही थी । देखा जाए तो मध्ययुगीन सांस्कृतिक परिवेश की आदर्शोन्मुख समग्र अभिव्यक्ति रामचरितमानस है। वैदिक संस्कृति की समग्रता 'गीता' में प्रकट हुई तो मध्ययुगीन संस्कृति की समग्रता 'रामचरितमानस' में प्रकट हुई ।

इसमें कोई अतिशयोक्ति नही कि संस्कृत भाषा का प्रभाव अन्य भाषाओं पर भी पड़ा । आधुनिक यूरोपीय भाषाओं में जर्मन सबसे अधिक विज्ञान-संगत भाषा है, इसका कारण है जर्मन भाषा के व्याकरण पर संस्कृत भाषा का गहरा प्रभाव । जर्मनी में संस्कृत तथा भारतीय भाषाओं के प्रति सदैव आदर का भाव रहा है। संस्कृत वहाँ अब से नहीं, डेढ़-दौ सौ साल से विधिवत् पढाई जा रही है। जर्मनी के 17 विश्वविद्यालयों में आज हिन्दी के स्वतंत्र विभाग हैं। जर्मनी का रेडियो-कोलोन संसार का एकमात्र केन्द्र है, जहाँ संस्कृत में समाचार ही नहीं, प्रति सप्ताह नियमित रूप से संस्कृत में शोधपूर्ण आलेख भी प्रसारित किए जाते हैं।

भारत की स्वाधीनता के बाद विश्वभर में हिन्दी व संस्कृत को जो मान्यता मिली है, वह विश्व की अनेक भाषाओं के लिए दुर्लभ है। विश्व में उसी भाषा को प्रधानता मिलेगी जिसका व्याकरण विज्ञान-संगत होगा जिसकी लिपि कम्प्यूटर की लिपि होगी। संस्कृत की पुत्री होने के कारण हिन्दी को यह आधार मिला है। इसलिए इसमें अंग्रेजी, फ्रैंच आदि की अपेक्षा अधिक संभावनाएं हैं। सही अर्थों में विश्वभाषा बनने की इक्कीसवीं शताब्दी भारत की ही नहीं विश्व की अग्रणी भाषा के रूप में हिन्दी की होगी इसमें कोई संदेह नहीं ।

-सुरेखा शर्मा
सलाहकार-हिन्दुस्तान भाषा अकादमी, दिल्ली

डॉ. सच्चिदानंद जोशी, सदस्य सचिव, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र को उनके कार्यालय में पत्रिका का अंक भेंट करते हुए अकादमी के अध्यक्ष श्री सुधाकर पाठक व श्री विजय शर्मा जी। इस अवसर पर प्रो. अवनीश कुमार, अध्यक्ष, वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग और श्री आर. रंगनेकर, निदेशक (प्रशासनिक), इं.गां.रा.क. केंद्र भी उपस्थित थे।

शिक्षा और रोजगार के बीच संस्कृत भाषा की चुनौती

''संस्कृत सर्वेषाम् भाषाणाम् जननी अस्ति'' यह कथन आज के संदर्भ में उतना ही सत्य है जितना कभी भारतीयों के लिए ''अतिथि देवो भव''। समय बदलने के साथ-साथ लोगों की सोच व विचार बदले और ''अतिथि तुम कब जाओगे'' कहावत अधिक प्रचलित हो गई। उसी प्रकार सभी भाषाओं की जननी कही जाने वाली 'संस्कृत' आज कल्पवास का समय गुजार रही है। वैदिक युग में संस्कृत भाषा ब्राह्मण वर्ग की भाषा थी, धीरे-धीरे समय बदला और यह जनभाषा बनी, परंतु समय के परिवर्तन ने इस देवभाषा को देवताओं तक ही सीमित कर दिया। आज संस्कृत मन्दिरों में, पूजा-पाठ के शुभ अवसरों पर या ब्राह्मण वर्ग तक ही सीमित रह गई। संस्कृत वही भाषा है जिसने हमें 'वसुधैव कुटुम्बकम्' अर्थात सारी पृथ्वी को अपना परिवार मानने की शिक्षा दी। इसी भाषा ने आदिकाव्य रामायण के माध्यम से जीवन के आदर्शों को उजागर किया, एक आदर्श पुत्र, भाई, राजा आदि बनने के लिए मनुष्य को प्रेरित किया । संस्कृत भाषा ने महाभारत के अंश श्रीमद् भागवत् गीता के माध्यम से जीवन में निरंतर कर्म करने का उपदेश दिया, योग का मार्ग दिखाया। इसी प्रकार संस्कृत भाषा में अनेक ऐसे ग्रंथ हैं जिनके माध्यम से जीवन के अमूल्य नैतिक मूल्य उभर कर आए, परंतु बड़े अफसोस के साथ कहना पड़ता है कि आज ये सब किताबी बातें बनकर रह गई हैं। आज का मनुष्य स्वयं आदर्श पुत्र, भाई, पति बने न बने पर उसे समाज से ऐसे ही चरित्र की अपेक्षा है, उसके अपने लिए नैतिक मूल्य अलग है और दूसरों के लिए अलग। भारतीय संस्कृति पर पश्चिमी सभ्यता का प्रभाव इतना अधिक बढ़ गया है कि भारत में 'अंग्रेजी', विद्यालयों व महाविद्यालयों में प्रमुख भाषा बन गई। वहीं रही-सही कसर अन्य देशों की भाषाओं ने पूरी कर दी। संस्कृत भाषा पर समय के साथ-साथ बार-बार अन्य भाषाओं ने कुठाराघात किया फिर चाहे वे जर्मन, फैंच या अन्य कोई भाषा हो। बार-बार संस्कृत अपने को खड़ा करने के प्रयत्न करती रही परंतु आज वह बैसाखियों के सहारे ही अस्तित्व में है।

संस्कृत भाषा को विद्यालयों में कक्षा छठी से आठवीं तक, भाषाओं में तीसरा स्थान मिलने लगा और वह भी अन्य फैंच, जर्मन आदि भाषाओं के साथ। विद्यालयों में जाओ तो ऐसा प्रतीत होता है कि मानों सभी अभिभावकों के बच्चें भारत छोड़कर अन्य देशों में गमन करेंगे इसीलिए उन्हें अन्य भाषाएँ पढ़ना आवश्यक हो गया। उनके लिए भारतीय संस्कृति को जानना, समझना आवश्यक नहीं रहा क्योंकि वे तो दूसरे देश के निवासी हो जाएँगें। जीवन की सच्चाई यही है कि हमें सदा दूसरे की थाली में लड्डू नजर आते हैं, इसीलिए दूसरे देशों की संस्कृति पसंद है। वहीं रोजगार के सुअवसर दिखते हैं।

डॉ. शिल्पी सेठ

दूसरे देशों में जाकर किसी रेस्टॉरैन्ट में जाकर खाना परोसना भी शोभाकर लगता है परंतु अपने देश में कर देकर, सम्मान की जिन्दगी जीना पसंद नहीं। संस्कृत भाषा के साथ सौतेला व्यवहार करने में भूत व वर्तमान काल की सरकार ने भी कोई कसर नहीं छोड़ी है। केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा विभाग ने कक्षा नौवीं व दसवीं में अंग्रेजी को अनिवार्य घोषित कर हिन्दी व संस्कृत में विकल्प की राजनीति खेली है। अनेक परीक्षाओं में हिन्दी को तो अनिवार्य बना दिया परंतु संस्कृत का गला घोट दिया। अपने देश में रहते हुए भी ऐसा लगता है कि हम कहीं अन्य देश के निवासी है। जब विद्यालयों में अपने अस्तित्व के लिए निरंतर संघर्ष कर रही संस्कृत बार-बार घायल हो रही है तो महाविद्यालयों में इसकी क्या दशा होगी ? जरा सोचिए। संस्कृत भाषा के विषय में ऐसा प्रतीत होता है कि इस भाषा से संबंधित रोजगार ढूँढने के लिए अन्य देशों में जाना पड़ेगा, जहाँ इस भाषा का सम्मान होता हो। जहाँ 'नासा' में संस्कृत को पूर्ण वैज्ञानिक भाषा की उपाधि दी गई, जहाँ आयुर्वेद की शिक्षा व वेद-मन्त्रोच्चारण की विशेष शिक्षा देने का प्रबंध किया गया। वहीं दूसरी तरफ भारत में संस्कृत की नींव पर अनेक आघात हुए और यह भाषा छिन्न-भिन्न रूप में आ गई। आज समाज के समक्ष एक बड़ी चुनौती खड़ी हो गई है कि वह संस्कृत को कैसे बचाए? संस्कृत का भविष्य खतरे में पड़ चुका है, जहाँ सिर्फ संस्कृत भाषा शिक्षा व रोजगार के रूप में चुनौती बनकर रह गई ।

समाज में संस्कृत पढ़ने वाले को पण्डित की संज्ञा देकर व्यंग्य किया जाता है। समाज के उन विद्वत ठेकेदारों से पूछा जाए कि क्या विज्ञान पढ़ने वाले सिर्फ इंजीनियर व डॉक्टर ही बनते हैं? क्या इनके लिए अन्य विकल्प उपलब्ध नहीं है? विज्ञान पढ़ने वाला विद्यार्थी विद्वानों की सूची में गणित है, वहीं दूसरी तरफ संस्कृत पढ़ने वाला समाज में उपहास का पात्र बनता है, वह अल्पज्ञानी की श्रेणी में गणित है। यही कारण है कि समाज संस्कृत के प्रति उदासीन होता जा रहा है, लोग संस्कृत भाषा पढ़ने से कतराने लगे हैं। हालात इस कदर बिगड़ गए हैं कि संस्कृत पढ़ने में किसी की रुचि नहीं रही, परिणामस्वरूप संस्कृत में रोजगार के अवसर समाप्त होते जा रहे हैं। वर्तमान सरकार को संस्कृत की उन्नति के लिए कुछ ठोस कदम उठाने होंगे जिससे अपना अस्तित्व खोती संस्कृत पुनः अस्तित्व में आ सके ।

-डॉ. शिल्पी सेठ

भारतीय वांग्मय में 'लिंचिंग' शब्द नहीं है लेकिन...

ऋग्वेद संहिता, प्रथम मंडल सूक्त 38

हे मरुतो आप कहाँ हैं? किस उद्देश्य से आप द्युलोक मे गमन करते हैं ? पृथ्वी में क्यों नही घूमते? आपकी गाएँ, आपके लिए नहीं रंभाती क्या ? कुछेक वर्ष पूर्व जब भारत में, विशेष रूप से गुजरात के ऊना क्षेत्र में, गौकशी के शक में 'लिंचिंग' की वारदात बहुत बढ गई तो कुछ नये सवाल उठे । इनमें से एक प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के एक वक्तव्य के बाद उठा। प्रश्न था कि 'लिंचिंग को भारतीय भाषाओं में क्या कहा जाये ?' मोदी जी ने अपने वक्तव्य में लिंचिंग अथवा उसके पर्याय या समानार्थी किसी शब्द का उपयोग नहीं किया था । उन्होने संकेत में इसकी चर्चा की थी । उनके मूल वक्तव्य में इंगित किया गया था कि लिंचिंग नहीं की जानी चाहिए और यह एक अपराध है। बाद में 26 जून 2019 को प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने संसद में राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद के अभिभाषण पर बहस के राज्यसभा में दिए जवाब में लिंचिंग शब्द का ही इस्तेमाल कर कहा कि झारखंड को मॉब लिंचिंग का अड्डा बताया गया । युवक की हत्या का दुख मुझे भी है और सबको होना चाहिए । दोषियों को सजा होनी चाहिए। हिंसा जहाँ भी हो चाहे झारखंड, पश्चिम बंगाल या केरल सख्ती से निपटा जाना चाहिए। मोदी जी के प्रथम वक्तव्य के कुछ समय बाद राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के सरसंघचालक मोहन भागवत का बयान आया कि लिंचिंग 'फॉरेन कंस्ट्रक्ट' (विदेशी निर्मिति) है । उनका शायद यह आशय रहा होगा कि भारत के संदर्भ में लिंचिंग का कोई स्थान नहीं है और इसलिये भारतीय वांग्मय में लिंचिंग शब्द ही नहीं है । सवाल उठे कि पहले की बात छोड़ भी दें, तो फिर अब जब सरकार और न्यायालय भी मान चुकी हैं कि भारत में लिंचिंग के अपराध सामने आने लगे हैं तो उसे भारतीय भाषाओं में एक शब्द में क्या कहा जाए?

लिंचिंग के ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी में वर्णित अर्थ के अनुसार यह एक क्रिया है जिसमें उन्मादी भीड़, किसी व्यक्ति की पीट-पीट कर जान ले लेती है। इस वर्णित अर्थ में लिंचिंग और गौकशी के भारतीय सन्दर्भों में अंतर सम्बन्ध पूरी तरह स्पष्ट नहीं होते। सवाल यह भी उठना स्वाभाविक है कि गौकशी और गौहत्या में क्या अंतर है ? क्या उन्हें एक-दूसरे के पर्याय के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है? इंग्लैण्ड में औद्योगिक क्रान्ति के बाद बाजार के हितों को बढ़ाने के लिए मुख्यत: उत्तर भारत के सैन्य मार्गों के आस पास के कुछ क्षेत्रों में खड़ी बोली से विकसित की गई हिन्दी और उसके बहुत पहले आमिर खुसरो के समय से ही प्रचलित हिंदावी में भी लिंचिंग के लिए कोई शब्द नहीं है । तो क्या संस्कृत भी इतनी दरिद्र है कि उसमें इसकी अभिव्यक्ति के लिए कोई शब्द नहीं गढ़ा जा सका है? अगर संस्कृत की भाषागत दरिद्रता नहीं है तो क्या उसके ग्रंथों को टटोल कर कोई कार्यशील एक शब्द चिन्हित किया जा सकता है? मेरी नजर संयोग से ऋग्वेद संहिता प्रथम मंडल सूक्त 38 पर पड़ी । फिर प्रश्न कौंधा कि इसमें जो वर्णित है वो क्यों वर्णित है ? इंटरनेट पर संस्कृत और हिन्दी के बढ़ते उपयोग के बावजूद कंही भी लिंचिंग के लिये सटीक एक शब्द नहीं दिखता है । मैंने ऊना में लिंचिंग की बढ़ती वारदात के समय मिली एक फोटो का एक पत्रकार के रूप में कैप्शन देने की कोशिश की। वह फोटो मरी हुई गायों से भरे एक क्षेत्र के बगल के रास्ते में अपनी नाक को रुमाल से ढक कर जा रहे श्वेत वस्त्रधारी एक विद्वान् का है। मैंने इस सूक्त का संस्कृत में उपयोग उसके हिन्दी भावानुवाद के साथ इस्तेमाल यही सोच कर किया कि हम लोग अपनी भाषाओं को समकालीन अर्थनीतिक, सामाजिक, राजनीतिक और विधिक आवश्यकताओं के अनुरूप समृद्ध नहीं करते हैं तो बहुत गलत करते हैं । क्या हम लिंचिंग को संस्कृत में लिंकिंग ही नहीं कह सकते ? अगर नहीं तो क्यों? सोचिये कहीं यह संस्कृत की भाषागत दरिद्रता नहीं हमारी वैचारिक दरिद्रता तो नहीं है? क्या हम लिचिंग के सत्य को स्वीकार कर अपनी भाषा में एक सरल शब्द अपना नहीं सकते ? नहीं तो हमारी भाषा आगे कैसे बढ़े?

चन्द्र प्रकाश झा

-चंद्र प्रकाश झा
वरिष्ठ पत्रकार

इस बात का ध्यान सदैव रखना चाहिए कि पहले अंग्रेजी को यहाँ से हटाना है।
अंग्रेजी चली गई तो उसका स्थान केवल हिन्दी नहीं, सारी प्रादेशिक भाषाएँ लेंगी।
अंग्रेजी के यहाँ रहते देश की अन्य भाषाएँ अपना विकास नहीं कर पाएंगी...
यह भी ध्यान रखना होगा कि अंग्रेजी को तो यहाँ से जाना ही चाहिए, क्योंकि यह हमारे राष्ट्रीय स्वाभिमान का प्रश्न है।

-पं. दीनदयाल उपाध्याय

समाचार माध्यमों में अपनी अस्मिता की लड़ाई लड़ रही हिन्दी

लोकेन्द्र सिंह

यह सर्वविदित है कि हिन्दी के समाचार माध्यमों में अंग्रेजी शब्दों का बढ़ता प्रयोग भारतीय मानस के लिए चिंता का विषय बन गया है। विशेषकर, हिन्दी समाचार पत्रों में अंग्रेजी के शब्दों का चलन अधिक गंभीर समस्या है। हमें नहीं भूलना चाहिए कि हिन्दी समाचार पत्रों की भाषा से नवयुवक अपनी भाषा सुधारते थे। समाचार पत्र सूचना और अध्ययन सामग्री देने के साथ-साथ समाज को भाषा का संस्कार भी देते थे। कोई शब्द शुद्ध है या अशुद्ध, जब यह प्रश्न खड़ा होता था, तब समाचार पत्रों के पन्नों में देखा जाता था कि वह कैसे लिखा गया है? आज स्थिति यह नहीं है। सामान्य व्यक्ति के अंतर्मन में यह बात गहरे बैठ गई है कि समाचार पत्र शुद्ध भाषा उपयोग नहीं कर रहे हैं। समाचार पत्रों में भाषा का घालमेल है। पाठकों की इस धारणा को 'विश्वसनीयता का संकट' मानकर समाचार माध्यमों को गंभीरता से चिंतन-मंथन करने की आवश्यकता है।

हमें यह आत्म मुग्धता छोडनी होगी कि हम पाठकों की सुविधा के लिए आम बोलचाल की भाषा का उपयोग करते हैं। अखबार को पठनीय बनाते हैं। सरल भाषा में खबर लिखते हैं ताकि सामान्य जन को समझ आ सके। भले ही हम न मानें, लेकिन सच यह है कि सामान्य जन अपेक्षा कर रहा है कि हम सम्यक भाषा का उपयोग करें। हिन्दी में खबर लिखें, 'हिंग्लिश' में नहीं। आज हम कोई भी हिन्दी का समाचार पत्र उठाकर देखें, शीर्षक से लेकर खबर की अंतिम पंक्ति तक अंग्रेजी शब्दों की घुसपैठ पाते हैं। हालांकि इसे अंग्रेजी शब्दों की घुसपैठ कहना ठीक नहीं, यह शब्द अपने आप नहीं आए, हमने इन्हें माथे पर बिठाया है। दरअसल, हम औपनिवेशिक मानसिकता के शिकार हैं। हम यह मान बैठे हैं कि यह देश अंग्रेजी के शब्दों को आसानी से समझता है, अपनी मातृभाषा को ठीक से नहीं पहचानता है। कुछ समाचार पत्रों के मालिकों की यह दलील एक बार मान भी लें कि भारत की संतति अपनी हिन्दी को ठीक से नहीं पहचान पा रही है।

अब यहाँ सवाल है कि उसे हिन्दी के विराट स्वरूप से परिचित कराने का दायित्व किसका है? आज अखबारों का जिस तरह का चरित्र हो गया है, उससे तो भारत का सामान्य आदमी अपनी भाषा भूलेगा ही? इसलिए मध्यप्रदेश के प्रमुख समाचार पत्र जब यह शुभ संकल्प ले रहे हैं कि वे अंग्रेजी के शब्दों को बाहर का रास्ता दिखाएंगे, तब सकारात्मक बदलाव की एक आहट सुनाई देती है। अंग्रेजी के महिमामंडन और अपनी अनदेखी से दु:खी होकर एक कोने में खुद को समेटकर बैठी हिन्दी थोड़ा मुस्काई है। उसे भरोसा है कि उसके हिन्दी पुत्र अब उसका मान बढ़ाएंगे। औपनिवेशिक मानसिकता की बाढ़ में बहकर आई अंग्रेजी शब्दों के अपशिष्ट को उसके आंचल से हटाएंगे। उम्मीद है कि प्रदेश के ये समाचार पत्र अपने संकल्प पर अडिग रहेंगे। उक्त सभी समाचार पत्रों ने यदि ईमानदारी से अपने संकल्प को निभाने का प्रयास किया, तब निश्चिय ही सकारात्मक बदलाव संभव है और उनका यह प्रयास पत्रकारिता के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखा जाएगा। हिन्दी जगत में भी आदरभाव के साथ इस संकल्प का सदैव स्मरण किया जाएगा। इस सबके बावजूद हिन्दी समाचार पत्रों का यह प्राथमिक कर्तव्य है कि वह अपनी आत्मभाषा के संवाहक बनें।

'स्वदेश' की राष्ट्रहित की पत्रकारिता को 50 वर्ष पूर्ण होने पर उसके प्रधान संपादक राजेन्द्र शर्मा कहते हैं- 'स्वदेश ने राष्ट्रभाषा की रक्षा में एक पहल करने की कोशिश की है, जिसे सब ओर से उत्साहित समर्थन प्राप्त हो रहा है। बल्कि यह कहना अधिक उचित होगा कि उसके संकल्प को हिन्दी पत्रकारिता ने अपना संकल्प बना लिया है। इस पहल की फलश्रुति यह है कि अब हिन्दी की अस्मिता पर हो रहे वीभत्स आक्रमण का सामना करने की चुनौती हिन्दी के समाचार पत्रों और अन्य माध्यमों ने स्वयं स्वीकार करने का निर्णय किया है। हिन्दी और देश की चिंता बढ़ाने की वर्तमान स्थिति को बदलने के लिए भोपाल के प्रमुख समाचार पत्रों ने जो प्रतिबद्धता प्रकट की, वह आनंदित करने वाली है।' उन्होंने बताया कि इस आयोजन के पहले 'स्वदेश' की ओर से भोपाल से प्रकाशित होने वाले कुछ समाचार पत्र समूहों के संचालकों और संपादकों से चर्चा कर उनसे निवेदन किया गया था कि अब समय आ गया है कि जब हिन्दी के समाचार पत्र ही, अपनी मातृभाषा और राष्ट्रभाषा की रक्षा के लिए एकजुट होकर खड़े हों और साफ-सुथरी और जन सामान्य के लिए बोधगम्य हिन्दी को बचाने और बनाए रखने की मुहिम में जुट जाएं। हिन्दी समाचार पत्रों में अंग्रेजी के शब्दों का अविवेकपूर्ण और फूहड़ ढंग से होने वाला उपयोग, हिन्दी के कथित बड़े समाचार पत्रों की ऐसी शर्मनाक दुर्गति कर रहा है कि उन्हें हिन्दी का समाचार पत्र कहना या मानना भी अनुचित प्रतीत होता है।

कुछ समाचार पत्र तो इस काम को पूरी तरह सोच विचार कर, एक स्पष्ट उद्देश्य के साथ अंजाम दे रहे हैं, किन्तु अधिकांश केवल देखा-देखी में ही, बिना विचारे ही इसके शिकार हो रहे हैं। 'स्वदेश' ने उन सबको टटोला तो सबके मन में पीड़ा थी, वे स्थिति

को बदलने को आतुर थे, इसलिए जब उनके सामने यह विचार रखा कि वे अपने समाचार पत्र की वाणिज्यिक रणनीति 'हिन्दी' के आधार पर बनाएं और ऐसी साफ-सुथरी हिन्दी लेकर पाठकों के पास जाएं कि उनका समाचार पत्र बच्चों को सही हिन्दीका ज्ञान देगा, उनकी भाषा बिगाड़ेगा नहीं। उनके बच्चों और हिन्दी के भविष्य के साथ खिलवाड़ नहीं करेगा। श्री शर्मा ने बताया- 'हमें यह कहते हुए प्रसन्नता है कि अपने प्रारंभिक दौर में हमने जिनसे भी संपर्क किया, उनमें से किसी ने भी असहमति प्रकट नहीं की। इस पवित्र संकल्प के लिए इन सबका अभिनंदन और अभिवादन। परन्तु यह संख्या यहीं रुकने वाली नहीं है, हर हिन्दी समाचार पत्र इस पवित्र यज्ञ में अपनी आहुति समर्पित करने के लिये तत्पर रहेगा, इसमें कोई संदेह नहीं। हम सबसे अनुरोध करेंगे।'

'हिन्दी समाचार माध्यमों में भाषा की चुनौती' विषय पर राष्ट्रीय विमर्श में केंद्रीय मंत्री नरेन्द्र सिंह तोमर, वरिष्ठ साहित्यकार एवं अक्षरा के संपादक कैलाश चंद्र पंत (भोपाल), वरिष्ठ पत्रकार प्रभु जोशी (इंदौर), अटल बिहारी वाजपेयी हिन्दी विश्वविद्यालय के कुलपति मोहनलाल छीपा (भोपाल), इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र के सदस्य सचिव डॉ. सच्चिदानंद जोशी (नई दिल्ली), संस्कृति विभाग मध्यप्रदेश के प्रमुख सचिव मनोज श्रीवास्तव (भोपाल), मध्यप्रदेश राष्ट्रीय एकता समिति के उपाध्यक्ष रमेश शर्मा (भोपाल) और देवपुत्र पत्रिका के प्रधान संपादक कृष्ण कुमार अष्ठाना ने अपने उद्बोधन में हिन्दी की वर्तमान दशा की ओर संकेत करने के साथ-साथ उसे बाजारवाद के षड्यंत्र से बाहर निकालने का मार्ग भी प्रशस्त किया। यदि सबके मंतव्य को सामूहिक रूप से व्यक्त करना हो, तब कवि दुष्यंत के भाव और शब्द उधार लेने होंगे। सब विद्वानों का मत था- 'हो गई है पीर पर्वत-सी पिघलनी चाहिए, इस हिमालय से कोई गंगा निकलनी चाहिए।' प्रदेश के हिन्दी समाचार पत्रों का यह शुभ संकल्प ऐसा ही भगीरथी प्रयास है, जिससे गंगा का प्रवाह संभव है।

समाचार माध्यमों में हिन्दी का स्वरूप बिगाड़ने के लिए राष्ट्रीय एकता समिति के उपाध्यक्ष रमेश शर्मा ने मार्क्स के पुत्रों को जिम्मेदार ठहराया। उन्होंने कहा कि जिन दिनों दुनिया में मार्क्स का बोलबाला था, तब भी स्वयं मार्क्स का मानना था कि भारत की समाज रचना ऐसी है कि यहाँ वर्ग संघर्ष की स्थिति नहीं है, यहाँ अगर कभी संघर्ष होगा तो जाति और भाषाई आधार पर होगा। मार्क्स वादियों ने 1942 में अंग्रेजों का साथ दिया और स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद योजनापूर्वक समाचार पत्रों में आ गए। वे जानते हैं कि समाचार पत्र केवल संवाद प्रक्षेपण का ही साधन नहीं हैं, बल्कि जनमत भी बनाते हैं। इसलिए उन्होंने योजनाबद्ध ढंग से भारतीय भाषाओं पर हमला करना शुरू किया। इनका मूल उद्देश्य भारतीय संस्कृति पर हमला करना है। उन्होंने ध्यान दिलाया कि आजादी की लड़ाई में सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण योगदान जिन तत्कालीन समाचार पत्रों का रहा था, आज वे सब बंद हो चुके हैं, लेकिन आजादी के पूर्व जितने भी अंग्रेजों के समर्थक समाचार पत्र थे, वे आज भी चल रहे हैं तथा स्वतंत्र भारत में अंग्रेजियत लाने की मुहिम जारी रखे हुए हैं।

वहीं इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय कला केन्द्र के सदस्य सचिव डॉ. सच्चिदानंद जोशी ने अपने वक्तव्य में हिन्दी के अनन्य सेवक माधवराव सप्रे द्वारा 1906 से 1908 के बीच लिखे गए लेखों को पढ़ने की सलाह श्रोताओं को दी। उन्होंने कहा कि उस समय भाषा को लेकर सप्रेजी की चिंता भी वैसी ही थी, जैसी आज हम सबकी है। जोशी ने कहा कि संचार माध्यमों से हमारी अपेक्षा तो ठीक है, किन्तु समाज में भी अच्छी भाषा का वातावरण बनाना चाहिए। समाज ही परिवर्तन ला सकता है। आज मोबाइल और इंटरनेट के माध्यम से स्लेग लेंग्वेज एवं शॉर्ट कट भाषा का प्रयोग बढ़ रहा है। यह समाज की भाषा बन गई, फिर क्या होगा? समाज की भाषा में सुधार लाए बिना मीडिया की भाषा में सुधार संभव नहीं है।

आज हिन्दी में अंग्रेजी शब्दों के बढ़ते प्रचलन के लिए संस्कृति विभाग के सचिव एवं साहित्यकार मनोज श्रीवास्तव ने अमेरिका के प्रभाव को प्रमुख कारण बताया। उन्होंने कहा कि आज हिन्दी में अंग्रेजी का बढ़ता प्रचलन गुलामी के कारण नहीं, बल्कि अमेरिकी प्रभाव के कारण है। आर्थिक पूंजीवाद ने भाषाई परिवर्तन किए हैं। अब खिचड़ी भाषा भी नहीं, बल्कि चटनी भाषा बन रही है। वहीं हिन्दी विश्वविद्यालय के कुलपति मोहन लाल छीपा ने समाज से आग्रह किया कि भाषाई गड़बड़ी करने वाले समाचार पत्रों का बहिष्कार किया जाना चाहिए। यकीनन यह एक महत्त्वपूर्ण कदम होगा। समाज की आड़ लेकर हिन्दी में अनावश्यक अंग्रेजी के शब्दों को ठूंसने वाले समाचार पत्रों को आईना दिखाने का काम समाज ही बखूबी कर सकता है। समाज की यह जिम्मेदारी है कि वह अखबारों को बताए कि उसे किस प्रकार की भाषा और किस प्रकार की सामग्री चाहिए।

हिन्दी में हो रहे घालमेल पर यदि पाठक अंगुली उठाने लगेगा, तब प्रत्येक समाचार पत्र अपनी भाषा ठीक करने के लिए मजबूर हो जाएगा। यदि डॉ. जोशी और छीपा के आग्रह को समाज स्वीकार कर ले तब उक्त समाचार पत्रों को बड़ा सहयोग मिलेगा, जिन्होंने हिन्दी को बचाने का संकल्प लिया है। इस राष्ट्रीय विमर्श में वरिष्ठ पत्रकार एवं साहित्यकार प्रभु जोशी ने विचारोत्तेजक उद्बोधन प्रस्तुत किया। उन्होंने कहा कि सच्चाई यह है कि हम हिन्दी बोलने वालों ने ही हिन्दी की हत्या की सुपारी ली हुई है। अंग्रेजी का व्यवसाय अब इंग्लैंड नहीं, बल्कि अमेरिका और डब्लूटीओ कर रहा है। जब कोई गुलाम बनने को आतुर हो, तो फिर

युद्ध पोतों की क्या आवश्यकता? उन्होंने ध्यान दिलाया कि परिवर्तन सत्ता केंद्रित होते हैं। कांग्रेस शासन ने एक सर्कुलर जारी किया था, जिसमें कहा गया था कि हिन्दी को सरल बनाने के लिए उसमें अंग्रेजी शब्द शामिल किए जाएं। उस सर्कुलर के कारण हिंग्लिश का प्रचलन बढ़ा। उन्होंने कहा कि आज ऐसी स्थिति बन गई है कि भाषा की शुद्धता की नहीं, बल्कि भाषा को बचाने की बात प्राथमिक है। क्या आप जानते हैं कि बीसवीं सदी में सारी अफ्रीकी भाषाएं नष्ट कर दी गईं।

हमारे यहाँ भी भाषा का व्याकरण खत्म कर उसे लूली-लंगड़ी बनाने का षड्यंत्र चल रहा है। भाषा पर अंतिम हमला एफडीआई ने किया है, उसकी शर्त है, हिन्दी को रोमन बनाना। इसलिए जिन अखबारों ने एफडीआई लिया है, वे हिन्दी की बात सुनेंगे ही नहीं। यह सांस्कृतिक आदान-प्रदान का नहीं, बल्कि सांस्कृतिक अपहरण का युग है। राष्ट्रीय विमर्श में हिन्दी जगत के प्रमुख हस्ताक्षर कैलाशचंद्र पंत ने कहा कि इस समय स्पष्टत: दो धाराएं चल रही हैं, एक है जिसे राष्ट्रवादी कहा जाता है, किन्तु मैं उसे सांस्कृतिक धारा कहता हूँ और दूसरी है आयातित गौरांग महाप्रभु धारा, जो गोरी चमड़ी के प्रति आसक्त होती है। आजादी के पूर्व इस धारा के प्रतिनिधि राजा राममोहन राय ने तो एक बार कहा भी था कि अंग्रेजों का आना भारत के हित में है। किन्तु इसके विपरीत उस समय सांस्कृतिक पहचान की दूसरी धारा भी प्रवाहित होती रही।

बंगाल के केशवचन्द्र सेन ने गुजरात के स्वामी दयानंद सरस्वती से आग्रह किया कि वे अपने प्रवचन संस्कृत के स्थान पर हिन्दी में दें। लोकमान्य तिलक ने महाराष्ट्र के बुद्धिजीवियों की एक बैठक बुलाई और प्रश्न किया- कोई राष्ट्रभाषा होना चाहिए अथवा नहीं? और हो तो कौन-सी हो? सर्वसम्मत स्वर आया कि राष्ट्रभाषा अनिवार्य है और वह केवल हिन्दी ही हो सकती है। उन्होंने बताया कि हिन्दी के लिए समर्पित पत्रकारों महावीर प्रसाद द्विवेदी, माखनलाल चतुर्वेदी, मैथिलीशरण गुप्त, बालकृष्ण शर्मा नवीन और गणेश शंकर विद्यार्थी का उल्लेख करते हुए कहा कि इन सबके सामने राष्ट्र की सही तस्वीर थी। आज कुछ समाचार पत्रों द्वारा तो हिन्दी से बलात्कार किया जा रहा है। सांस्कृतिक पहचान को मिटाने का प्रयत्न होता रहा है।

बहरहाल, यहाँ यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगा कि हिन्दी के समाचार पत्रों के सम्मुख न केवल हिन्दी के स्वाभिमान का प्रश्न है, बल्कि समूचे देश की सांस्कृतिक पहचान का भी प्रश्न खड़ा है। मध्यप्रदेश के हिन्दी समाचार पत्रों ने अपनी भाषा को बचाने और उसे समृद्ध करने का जो संकल्प लिया है, उसके साथ अन्य अस्मिताओं के प्रश्न भी जुड़े हुए हैं। इसलिए इस संकल्प को सभी संस्थानों को अपने समाचार पत्रों के पन्नों पर उतारना होगा। कहते हैं कि शुभ संकल्पों को पूरा करने में प्रकृति भी सहायक सिद्ध होती है। इसलिए भरोसा किया जा सकता है कि हिन्दी के स्वाभिमान के इस यज्ञ में सभी समाचार पत्रों की पवित्र आहुतियां भाषाई और सांस्कृतिक वातावरण को स्वच्छ करेंगी।

वेबदुनिया से साभार

-लोकेन्द्र सिंह
(लेखक माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय में कार्यरत हैं)

आवश्यक सूचना

हिन्दुस्तानी भाषा भारती
'त्रैमासिक पत्रिका'

अब 'हिन्दुस्तानी भाषा भारती' (त्रैमासिक पत्रिका) के सभी अंक कविता कोश में उपलब्ध हैं। एक ही जगह पत्रिका के सभी अंकों को पढ़ा जा सकता है। कविता कोश का लिंक नीचे दिया गया है जिस पर क्लिक करके आप पत्रिका के सम्पूर्ण अंक पढ़ सकते हैं ।

http://kavitakosh.org/hindustanibhashabharati

भाषासु मुख्या मधुरा दिव्या गीर्वाण भारती

देववाणी अथवा सुरभारती संस्कृत भाषा भारत की आदि शास्त्रीय भाषा है। संस्कृत भाषा भारत की ही नहीं समस्त विश्व की परिष्कृत भाषाओं में प्राचीनतम, शुद्ध एवं मधुर भाषा है। सभ्यता के उषाकाल मे ऋषि-मुनियों के कठिन तप, ध्यान एवं योग से ही संस्कृत भाषा का उदय हुआ था और सर्वप्रथम भारतवर्ष ही इसके दर्शनों से अभिभूत हुआ। संसार के अन्य देश जब सांकेतिक भाषाओं का प्रयोग कर रहे थे, उस समय भारत में आर्य लोग सुसभ्य एवं सुसंस्कृत भाषा के माध्यम से ब्रह्मज्ञान का आस्वादन ले रहे थे। ऋषि मुनियों एवं उत्कृष्टतम महापुरुषों ने इसी दिव्य भाषा में आदि सभ्यता को अपने वचनों एवं उपदेशों से जनमानस को प्रभावित किया। इतना ही नहीं भारत की उत्कृष्टतम मनीषा, प्रतिभा, अमूल्य चिंतन-मनन विवेक, रचनात्मक सर्जना और वैचारिक प्रज्ञा की अभिव्यंजना इसी भाषा मे अभिव्यक्त हुई ।

विश्व का प्रमुख आदि ज्ञाननिधि ग्रंथरत्न ऋग्वेद इसी सुरभारती मे अवतरित हुआ। चारों वेद, अध्यात्मपरक समस्त उपनिषद् एवं पुराणों का प्रणयन इसी भाषा में उपलब्ध है। इतना ही नहीं भारत की विशाल संस्कृति से संबद्ध तथा लोकोभ्युदय एवम निः श्रेयस के साधक समस्त ज्ञान विज्ञान ग्रंथो का निर्माण इसी संस्कार युक्त संस्कृत भाषा में हुआ जिसका प्रतिफलन वर्तमान समय में परिदृश्य है। इसी परिप्रेक्ष्य में विश्व के इतिहासकार किसी भी रूप से भारतीय वाङ्मय के प्रति दृष्टि डालते है तो उनकी लेखनी स्वतः संस्कृत भाषा के साहित्य एवं उसमें वर्णित सामाजिक व्यवस्था, साहित्यिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक, राजनीतिक और ऐतिहासिक जीवन की व्यवस्था के प्रति नतमस्तक हो प्रशंसा के शब्दों में प्रवाहित हो जाती है ।

संस्कृत भाषा भी अपने विशाल साहित्य व उसमें निहित 'वसुधैव कुटुंबकम' की भावना एवं विभिन्न प्रत्ययों तथा उपसर्गों के द्वारा नव-नव शब्दों की रचना से समस्त संसार में अमर है। आधुनिक आर्य भाषाएँ - ग्रीक, लेटिन, जर्मन आदि- संस्कृत से ही उत्पन्न हुई हैं। अनेक यूरोपीय एवं प्रांतीय भाषाओं की जननी संस्कृत विश्व की सुसमृद्ध एवं संस्कारित भाषा है। आज भी हमारे धार्मिक अनुष्ठानों एवं दैनिक क्रिया व्यवहारों में इसी भाषा का प्रयोग होता है। संस्कृत केवल एक भाषा ही नहीं है अपितु एक संस्कृति है, संस्कार है। देश और दुनिया की प्रगति और सभ्याचार में इसका अभूतपूर्व योगदान है । इसकी इसी लोकप्रियता तथा 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' की भावना के कारण भीमराव अंबेडकर जी ने कहा था- कि संस्कृत पूरे भारत को भाषायी एकता के सूत्र मे बांध सकने वाली एक मात्र भाषा हो सकती है। अतः उन्होने इसे देश की आधिकारिक भाषा बनाने का सुझाव दिया था।

डॉ. वनिता शर्मा

संस्कृत विश्वपरिषद् शारदापीठ के शंकराचार्य जी का मानना था कि

''संस्कृत भाषमांतरा कापि भाषा न केवलम समृद्धा भवत्यपितु जीवितुमेव न शक्नुयात तथा संस्कृत भाषा बिना न कःअपि भारतीयो यथार्थभारतियो भवितुमहर्ती । संस्कृत भाषा भारतीयानां जीवन भाषा विधते।''

अतः संस्कृत में ही भारतीय संस्कृति निहित है। भारत के सभी संप्रदाय, सभी वर्ग, सभी समूह संस्कृत के प्रति आदर का भाव रखते हैं। हमारे आदर्शों, मान्यताओं एवं जीवन मूल्यों का स्रोत वही है और इसी ने हमारी परम्पराओं एवं रीतिरिवाजों को जन्म दिया है। आदिकाल से चली आ रही संस्कृति एवं सभ्यता के विकास के प्रमाणित लिखित साक्ष्य संस्कृत भाषा में ही उपलब्ध हैं।

वर्तमान समय में भी भारत के संविधान की आठवीं अनुसूची में संस्कृत को भी सम्मलित किया गया है। उत्तराखंड की द्वितीय राजभाषा के रूप में भी स्वीकार्य है। आकाशवाणी और दूरदर्शन से संस्कृत में वार्तालाप व समाचार प्रसारित होते हैं। हिन्दी गीतों के संस्कृतानुवाद, संस्कृत वार्ता, महापुरुषों की संस्कृत जीवन वृतियों, सुभाषित रत्नों के कारण अनुदित लोकप्रियता को प्राप्त हो रही हैं। उल्लेखनीय है कि कर्नाटक के शिमोगा जिले में मात्तुर नाम का ऐसा गाँव है जहाँ का हर बाशिंदा संस्कृत में ही बात करता है । क्या बच्चा, क्या बूढ़ा और क्या जवान, सभी धाराप्रवाह संस्कृत में बात करते हैं।

अतः संस्कृत भारत भूमि की ज्ञान धारा है जो क्षीण भले ही हो रही है पर अभी भी निश्चल और निष्प्राण नहीं है। एक ओर यदि इसके कण-कण में भारतीय संस्कृति है तो दूसरी और इसकी समृद्धि को विश्व की कोई भी नवीनतम भाषा नहीं पा सकती। आज आवश्यकता इस बात की है कि हम पुरातन और नवीन में समन्वय स्थापित करें और ऐसे लोगों की अवश्यकता है जो इस समन्वय के महत्व को पहचान कर भारतीय जनमानस का तद्नुरूप मार्गदर्शन करें। वस्तुतः संस्कृत भाषा की उपेक्षा भारतीय राष्ट्र के प्रति उपेक्षा है, उसका अनादर है। उसके प्रति प्रेम राष्ट्र के प्रति प्रेम है। संस्कृत के स्थायित्व के लिए ऐसा कहना उचित होगा ।

यावत्स्थास्यंति गिरयः सरितश्च महीतले
तावदभवेदमहिमा लोकेषु प्रचरिष्यति।

-डॉ. वनीता शर्मा
सम्पादकीय सलाहकार, हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी, दिल्ली

हिन्दी की हत्या के विरुद्ध

प्रभु जोशी

अंग्रेजी ने जो यात्रा ढाई-तीन सौ साल में तय की थी, हिन्दी ने अपनी पत्रकारिता के सहारे वह यात्रा मात्र आधी सदी में तय कर ली। लेकिन, आज हिन्दी को खतरा, अंग्रेजी की 'पत्रकारिता' से नहीं, बल्कि खुद हिन्दी-पत्रकारिता से हो गया है। यह ठीक उस हिंस्र-मादा की तरह व्यवहार कर रही है, जो कभी अपने ही जन्मे को खा जाने के लिए झपट पड़ती है। यहाँ तक कि आज हिन्दी के कुछ अखबार अपने प्रसार-क्षेत्र को बढ़ाने की उतावली में, हिन्दी के खामोश हत्यारे की भूमिका में उतरने पर आमादा हो रहे हैं। विसंगति यह है कि अन्य भारतीय भाषा आमतौर पर, और हिन्दी खासतौर पर उस 'भाषायी-साम्राज्यवाद' के निशाने पर है, जो हिन्दी को हटाकर 'अंग्रेजी को भारत की पहली भाषा' बनाने का एक विराट कुचक्र चला रहा है। सबसे दुर्भाग्यपूर्ण बात तो यह है कि इसमें वह हिन्दी के अखबारों के ही इमदाद ले रहा है।

अंग्रेजी के एक मनोभाषाविद ने हिन्दी को हटाने की बहुत ही चालाक रणनीति सुझाई है और वह रणनीति पिछले दरवाजे से हिन्दी के अधिकांश अखबारों में काम करने लगी है। बहुराष्ट्रीय कंपनियों के दलालों ने, अखबारों को यह स्वीकारने के लिए राजी कर लिया है कि इसकी 'नागरी-लिपि' को बदलकर, 'रोमन' करने का अभियान छेड़ दीजिए और वे अब तन-मन और धन के साथ इस तरफ कूच कर रहे हैं। उन्होंने इस अभियान को अपना प्राथमिक एजेंडा बना लिया है। क्योंकि इस देश में, बहुराष्ट्रीय-निगमों की महाविजय, सायबर युग में रोमन-लिपि की पीठ पर सवार होकर ही बहुत जल्दी संभव हो सकती है।

अंग्रेजों की बौद्धिक चालाकियों का बखान करते हुए एक लेखक ने लिखा था- ''अंग्रेजों की विशेषता ही यही होती है कि वे आपको बहुत अच्छी तरह से यह बात गले उतार सकते हैं कि आपके हित में आपका स्वयं का मरना बहुत जरूरी है। और, वे धीरे-धीरे आपको मौत की तरफ ढकेल देते हैं।'' ठीक इसी युक्ति से हिन्दी के अखबारों के पन्नों पर नई नस्ल के कुछ चिंतक, यही बता रहे हैं कि हिन्दी का मरना, हिन्दुस्तान के हित में बहुत जरूरी हो गया है। यह काम देश-सेवा समझकर जितना जल्दी हो सके करो, वर्ना, तुम्हारा देश सामाजिक-आर्थिक स्तर पर ऊपर उठ ही नहीं पाएगा। परिणाम स्वरूप, वे हिन्दी को बिदा कर देश को ऊपर उठाने के काम में जी-जान से जुट गए हैं।

ये मनोभाषाविद गुलाम मानसिकता के भारतीयों के मनोविज्ञान के अध्ययन के सहारे हिन्दी की हत्या की अचूक युक्तियाँ भी बताते हैं, जिससे भाषा का बिना किसी हल्ला-गुल्ला किए 'सुगम संहार' किया जा सकता है ताकि भाषा का संहार होते ही, उस पर टिकी संस्कृति भी लगे हाथ निपट जाए।

वे कहते हैं कि हिन्दी का हमेशा-हमेशा के लिए खात्मा करने के लिए आप अपनाइए। 'प्रॉसेस ऑफ कॉण्ट्रा-ग्रेज्युअलिजम्' अर्थात, बाहर पता ही नहीं चले कि भाषा को 'सायास बदला जा रहा है। बल्कि, बोलने वालों को लगे कि यह तो भाषा में होने वाले परिवर्तन की एक ऐतिहासिक-प्रक्रिया है, जिसके तहत, हिन्दी को हिंग्लिश होना ही है। और हिन्दी के अधिकांश अखबारों की भाषा में, यह परिवर्तन उसी प्रक्रिया के तहत इरादतन और शरारतन किया जा रहा है।

बहरहाल, वे कहते हैं कि इसका एक ही तरीका है कि आप अपने अखबार की भाषा में, हिन्दी के रोजमर्रा के मूल शब्दों को हटाकर, उनकी जगह अंग्रेजी के उन शब्दों को छापना शुरू कर दो, जो 'बोलचाल की भाषा' में 'शामिल-शब्दों' की श्रेणी (शेयर्ड-वकैब्युलरि) में आते हैं। जैसे कि रेल, पोस्ट-कार्ड, मोटर, टेलिविजन, कंप्यूटर, टेलीफोन, स्कूटर, बस, कार, हेलिकॉप्टर आदि-आदि।

इसके पश्चात् धीरे-धीरे आप इस 'शेयर्ड वकैब्युलरि' में रोज-रोज अंग्रेजी के नये शब्दों को शामिल करते जाइए और उसकी तादाद बढ़ा दीजिए। जैसे माता-पिता की जगह छापिए: 'पेरेंट्स'/ छात्र-छात्राओं की जगह : 'स्टूडेंट्स' / विश्वविद्यालय की जगह : 'युनिवर्सिटी'/रविवार की जगह : 'संडे'/यातायात की जगह : 'ट्रेफिक' आदि-आदि। कुल मिलाकर अंततः उनकी तादाद इतनी बढ़ा दीजिए कि मूल-भाषा (हिन्दी) के केवल कारक भर रह जाएँ। क्योंकि कुल मिलाकर रोजमर्रा के बोलचाल में बस हजार-डेढ़ हजार शब्द ही तो होते हैं और आपको सिर्फ हिन्दी के इतने ही शब्दों को हटाकर अंग्रेजी के शब्दों का वापरने की शुरुआत करना है। यदि कोई इनको लेकर आपत्ति करे तो उनकी आपत्ति छीनने का एक ही तर्क है कि श्रीमान ये तो सब रोजमर्रा के बोलचाल के ही शब्द हैं और हिन्दी को समृद्ध करना है तो इन्हें स्वीकारना ही होगा। यहाँ अंग्रेजी का उदाहरण दीजिए कि देखिए अंग्रेजी के शब्दों में भी हिन्दी के पचास शब्द ले लिए गए हैं, तो फिर हिन्दी को अंग्रेजी के शब्दों से क्यों ऐतराज होना चाहिए। इसलिये आप ये शुद्धतावादी पंडिताऊ दृष्टि बदलिए। (वास्तव में देखा जाए तो अंग्रेजी में हिन्दी के शब्द दाल में नमक के बराबर है, जबकि ये नमक में दाल मिला रहे हैं।)

यहाँ वह यह भी कहते हैं कि संवेदना और संस्कृति से जुड़ी शब्दावली को बदलना शुरू करिए और यदि इस क्षेत्र में आपके हेरफेर को लेकर कोई प्रतिरोध उत्पन्न नहीं होता है, तो यह संकेत है कि इस भाषा को बहुत जल्दी बिदा किया जा सकता है।

भाषा को परिवर्तित करने का यह चरण, 'प्रोसेस ऑफ डिसलोकेशन' कहा जाता है। यानी की 'हिन्दी के रोजमर्रा के मूल शब्दों को धीरे-धीरे बोलचाल के जीवन से उखाड़ते जाने का काम।' ऐसा करने से इसके बाद भाषा के भीतर धीरे-धीरे 'स्नोबॉल थियरी' काम करना शुरू कर देगी-अर्थात बर्फ के दो गोलों को एक दूसरे के निकट रख दीजिए, कुछ देर बाद वे एक दूसरे से घुलमिलकर इतने जुड़ जाएँगे कि उनको एक दूसरे से अलग करना संभव नहीं हो सकेगा। यह 'सिद्धांतकी' (थियरी) भाषा में सफलता के साथ काम करेगी और अंग्रेजी के शब्द, हिन्दी से इस कदर जुड़ जाएँगे कि उनको अलग करना मुश्किल होगा।

इसके पश्चात् शब्दों के बजाय पूरे के पूरे अंग्रेजी के वाक्यांश छापना शुरू कर दीजिए। अर्थात 'इनक्रीज द चंक ऑफ इंग्लिश फ्रेजेज'। मसलन 'आऊट ऑफ रीच/बियाण्ड डाउट/नन अदर देन/एज एण्ड व्हेन रिक्वायर्ड' / आदि आदि। कुछ समय के बाद लोग हिन्दी के उन शब्दों को बोलना ही भूल जाएँगे। उदाहरण के लिए हिन्दी में गिनती स्कूल में बंद किए जाने से हुआ यह है कि यदि आप बच्चे को कहें कि अड़सठ रुपये दे दो, तो वह अड़सठ का अर्थ ही नहीं समझ पाएगा, जब तक कि उसे अंग्रेजी में 'सिक्सटी एट' नहीं कहा जाएगा। इस रणनीति के तहत बनते भाषा रूप का उदाहरण हिन्दी के एक अखबार से उठाकर दे रहा हूँ।

'युनिवर्सिटी के वाइस चांसलर को स्टूडेंट्स ने अपने पेरेंट्स के साथ राइटिंग में कम्प्लेंट की है कि मार्कशीट्स के डिले होने से उनके दूसरे इन्स्टीट्यूट्स में एडमिशंस में चांसेस निकाले जाएँगे।'

इस तरह की भाषा को लगातार पाँच-दस वर्ष तक प्रिंट-माध्यम से पढ़ते रहने के बाद जो नई पीढ़ी इस किस्म के अखबार पठन-पाठन के कारण बनेगी, उसकी यह स्थिति होगी कि उसे कहा जाय कि वह हिन्दी में बोले तो वह गूँगा हो जाएगा। उनकी इस युक्ति को वे कहते हैं 'इल्यूजन ऑफ स्मूथ ट्रांजिशन'। अर्थात हिन्दी की जगह अंग्रेजी को निर्विघ्न ढंग से स्थापित करने का सफल माध्यम है ।

हिन्दी को इसी तरीके से हिन्दी के अखबारों में 'हिंग्लिश' बनाया जा रहा है। समझ के अभाव में अधिकांश हिन्दी भाषी लोग और विद्वान लोग भी इस सारे सुनियोजित एजेंडे को भाषा के 'परिवर्तन की ऐतिहासिक प्रक्रिया' ही मानने लगे हैं और हिन्दी में इस तरह की व्याख्या किए जाने का काम होने लगा है। गाहे-ब-गाहे लोग बाकायदा अपनी गर्वीली मुद्रा में वे बताते हैं जैसे कि वे अपनी एक गहरी सार्वभौम-प्रज्ञा के सहारे ही वे इस सच्चाई को सामने रख रहे हों कि हिन्दी को हिंग्लिश बनना अनिवार्य है। उनको तो पहले से ही इसका इलहाम हो चुका है और ये तो होना ही है।

एक भली-चंगी भाषा से, उसके रोजमर्रा के साँस लेते शब्दों को हटाने और उसके व्याकरण को छीन कर उसे 'बोली' में बदल दिए जाने को 'क्रियोल' कहते हैं। अर्थात हिन्दी को 'हिंग्लिश' बनाना, एक तरह का उसका चुपचाप किया जा रहा 'क्रियोलीकरण' है। और 'कांट्रा-ग्रेजुअलिज्म' के हथकंडों से बाद में उसे 'डि-क्रियोल' किया जाएगा। अर्थात विस्थापित करने वाली भाषा (अंग्रेजी) को मूल भाषा (हिन्दी या अन्य भारतीय भाषाओं) की जगह आरोपित करना।

भाषा की हत्या के एक योजनाकार ने अगले और अंतिम चरण को कहा है कि अब इसके बाद आता है 'फायनल असाल्ट ऑन हिन्दी'। बनाम हिन्दी को अखबार में 'नागरी-लिपि' के बजाय 'रोमन-लिपि' में छापने की शुरुआत करना। अर्थात हिन्दी पर 'अंतिम प्राणघातक प्रहार'। बस हिन्दी की हो गई अंत्येष्टि। चूँकि हिन्दी को रोमन में लिख-पढ़कर बड़ी होने वाली पीढ़ी में देवनागरी में लिखी हिन्दी और छपी पुस्तकें नितांत अपठनीय हो जाएगी। इसे ही कहते हैं 'भाषा को बोली' में बदलना बनाम उसका 'क्रियोलीकरण करना'। अर्थात किसी भाषा से उसके व्याकरण और रोजमर्रा की शब्दावली को छीन लिया जाना। और बाद में इसके 'रोमन' में छापकर, उसे 'डि-क्रियोल' करना। या उसे उसकी मूल लिपि बदलकर रोमन में छापना। अब यह काम भारत में होने लगा है, जिसकी शुरुआत कोकणी को रोमनलिपि में लिखे जाने के निर्णय से शुरू हो चुका है। इसी युक्ति से गुयाना में, जहाँ 43 प्रतिशत लोग हिन्दी बोलते थे, वहाँ हिन्दी को इसी तरह से 'डि-क्रियोल' कर दिया गया और अब वहाँ देवनागरी की जगह रोमन-लिपि को चला दिया गया है, जिसके कारण हिन्दी की सैकड़ों किताबें नितांत अपठनीय होने जा रही है। यही काम त्रिनिदाद में इसी षड्यंत्र के जरिए किया गया है।

ऐसी स्थिति में दोस्तों अगर आप में अपनी मातृभाषा के प्रति प्रेम है और उसके नष्ट किए जाने पर खून खौलता है, तो आप अविलंब ऐसे तमाम अखबारों को सविनय पत्र लिखिए कि श्रीमान यदि ताजमहल या लाल किले जैसी राष्ट्रीय धरोहर की एक भी ईंट या दीवार तोड़ने पर अपराध कायम होता है, तो भाषाएँ भी इस राष्ट्र की धरोहर है और उन्हें नष्ट करना भी अपराध की ही श्रेणी में आता है। आप एक 'राष्ट्रीय-अपराध' कर रहे हैं और निवेदन है कि आप इसे अविलंब रोकिए और यदि आप नहीं रोकते हैं तो मैं आपका

शेष पृष्ठ संख्या 48 पर

'दुनिया की भाषाओं के लिए बेहतर विकल्प है : देवनागरी'

डॉ. लता अग्रवाल

भाषा न केवल भावों और विचारों की संवाहक होती है, अपितु यह हमारी संस्कृति की पोषक और संवर्धक है । संस्कृति भाषा के विकास का मूलाधार है। अत: भाषा का विघटन यानि आचार-विचार और संस्कृति का क्षरण है। नि:संदेह भाषा एक मौखिक और भावात्मक अनुभूति है । जैसे-जैसे सभ्यता का विकास हुआ मानव की अभिव्यक्ति का स्वरूप भी संशोधित होता गया । पहले वह केवल मौखिक रूप से अपने विचार अभिव्यक्त करता था तब किसी लिपि का विकास नहीं हुआ था । निश्चित ही उसे अपने विचारों को सुरक्षित करने की आवश्यकता महसूस हुई होगी, ऐसे में उसने चित्रों के माध्यम से भी अपनी बात कहने का प्रयास किया । फिर पाँचवीं सदी में वैदिक आर्यों ने ब्राह्मी लिपि का विकास किया, तत्पश्चात् ब्राह्मी से समस्त लिपियों का विकास हुआ । जिस तरह संस्कृत समस्त भाषाओं की जननी है उसी प्रकार हम कह सकते हैं ब्राह्मी लिपि भी संसार की अधिकांश भाषाओं की जननी है । अत: हम कह सकते हैं कि लिपि दरअसल वह चिन्ह हैं जिससे भाषा को स्थायित्व और मुहूर्त रूप मिलता है ।

विद्वान मानते हैं कि संसार में लगभग 4000 भाषाएँ हैं, उसमें से लगभग 400 ही लिखी जाती हैं अर्थात जो लिपिबद्ध हैं और जिनकी महज 40 लिपियाँ हैं, इन्हीं लिपियों को संसार की भाषाओं ने अपने सुविधानुसार अपनाया क्योंकि नई लिपि के मानक तैयार करने से आसान है इन्हीं लिपियों को अपनाकर लेखन करना । आज भी कई ऐसी बोलियाँ हैं जो अब तक लिपिबद्ध नहीं हो पाई हैं, वह इनमें से किसी भी लिपि को स्वीकार कर सकती हैं । एक बात और गौर करने की है कि भले ही लिपियाँ 40 हों किन्तु लिपि पद्धतियाँ महज 4 ही हैं । इन्हीं 4 लिपियों से 400 भाषाओं का व्यापार सुचारू रूप से चल रहा है ।

पहली लिपि पद्धति है चीनी- जो चित्रात्मक है और इसमें लगभग 30 हजार शब्द हैं । जिनसे लाखों शब्द बना लिए गये। जिसके उच्चारण से किसी अक्षर का पता नहीं चलता । क्योंकि चित्र और ध्वनि में कहीं कोई साम्यता नहीं है । महज 30 से 50 ध्वनियों से लाखों शब्द बनाये गये हैं ।

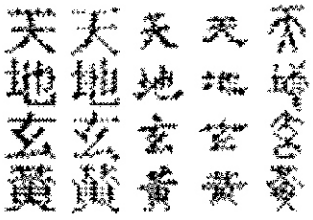

दूसरी संश्लिष्ट आकृति पद्धति- लिपि अरबी भाषा के लिए प्रयोग होती है । इसमें वर्ण पूरे नहीं लिखे जा सकते । उर्दू ने भी अरबी की लिपि को अपनाया है ।

तीसरी ध्वन्यातामक लिपि पद्धति- जो रोमन और अन्य पाश्चात्य देशों में प्रयोग होती है । रोमन सबसे प्रचलित भाषा है । अनुमानित है कि आज 250 भाषाएँ इसका प्रयोग कर रही है । इसमें अक्षरों के उच्चारण के आधार पर शब्द लिखे जाते हैं। किन्तु कई बार एक शब्द की दो चार ध्वनियाँ होने से इसमें उलझन होती है ।

चौथी आक्षरिक पद्धति- जिसकी लिपि देवनागरी है जैसे संस्कृत, हिन्दी, बंगला आदि । इसमें स्वर और व्यंजन के लिए अलग-अलग अक्षर और मात्रा चिन्ह हैं जो व्यंजन के साथ मिलकर लिखे जाते हैं । प्रत्येक मात्रा का स्थान तय है । यह वर्ण के चरों ओर लगती है इसलिए उलझन की कोई समस्या नहीं । यह इसका सबसे बड़ा गुण है यथा का-कि-की-कु-कू-कै-कं ।

भारत में लगभग 11 लिपियाँ हैं जिनमें देवनागरी ब्राह्मी की सर्वाधिक विकसित लिपि है । विद्वानों के मतानुसार देवनागरी के नामकरण को लेकर दो मत हैं । प्रथम - संस्कृत देवों की भाषा है अत: जिस लिपि में यह लिखी जा रही वह देवनागरी कहलाई । दूसरा यह वैदिक आर्यों द्वारा प्रथम प्रयोग में लाई गई जो देव नगरी काशी के रहने वाले थे अत: यह देवनागरी नाम से जानी जाने लगी । हम में से ज्यादा से ज्यादा लोग 2-4 लिपि ही जान पाते हैं । इसके आलावा यदि किसी लिपि को हम कहीं लिखी देखते हैं तो वह हमारे लिए महज एक चित्र या आकृति बनकर रह जाती है । जैसे चीनी भाषा....। क्योंकि वह हमें समझ नहीं आती । अत: भाषा को बोधगम्य बनाती है लिपि । लिपि भाषा के मौखिक रूप का प्रतिनिधित्व करती है ।

इस दृष्टि से हम कह सकते हैं कि भारतीय सभ्यता और संस्कृति जितनीं पुरानी है उतनी ही पुरानी है देवनागरी लिपि। इसका वैज्ञानिक रूप ही इसकी शक्ति है। ध्वनि प्रधान इस लिपि के परिवार में 52 वर्ण हैं जिनमें 11 मूल स्वर, 33 मूल व्यंजन, 2 उतिक्षप्त व्यंजन, 2 अयोगवाह 4, संयुक्ताक्षर है। कहना न होगा इस परिवार के तंतु परस्पर कुछ इस तरह जुड़े हुए हैं जैसे एक परिवार के सदस्य आपस में जुड़े होते हैं, और परिवार से जुड़कर रहने में ही

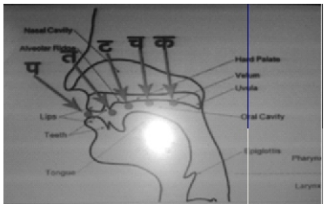

हमारी गरिमा होती है। ध्वनि प्रधान इस लिपि में छोटी से छोटी ध्वनि भेद के लिए एक अलग प्रतीक चिन्ह निर्धारित है । यथा – हम जब कहते हैं स, श या ष तीनों के उच्चारण में लगभग समानता लगती है किंतु जब हम गौर से अनुभव करेंगे तो पाएंगे तीनों के उच्चारण स्थल मुख के अलग-अलग स्थान से है। इसलिए वर्ण की बनावट में भी अंतर है। जो भाषा को स्पष्टता तो प्रदान करती ही है साथ ही समझने में सहयोग प्रदान करती है।

भारतीय भाषाओं में उर्दू और सिंधी को छोड़कर प्राय: सभी लिपियाँ ब्राह्मी लिपि से ही उद्धृत हैं जिसकी लिपि प्राचीन मनीषियों ने बहुत सोच समझकर बनाई है, जिसमें श्वास गति जिव्हा की स्थिति को ध्यान में रखकर, हमारे मुख से जो ध्वनियां उच्चारित होती हैं उसी आधार पर ध्वनि संकेतों के आकार स्वरूप लिपि का अविष्कार हुआ । जिसे हम वर्णमाला कहते हैं। यह ध्वनि परख तो है ही इसके लेखन और उच्चारण में भी साम्यता है। इसके अपने नियम हैं, जैसे- मात्राएं सदैव किसी व्यंजन के साथ लगती है। अक्षरों का विभाजन भी स्पष्ट है । यथा- क से म तक 20 अक्षर 5 भागों में विभक्त है सबका अपना स्पर्श उच्चारण स्थल है। जिनका नाम उनके उच्चारण स्थल के आधार पर निश्चित किया गया है। क- कंठव्य, (क वर्ण) च - तालव्य, (च वर्ग) ट-मूर्धन्य, (मूर्धन्य) त- (दन्तव्य,) प- (ओष्ठव्य) । हर पाँचवां अक्षर पंचम वर्ण है। नासिका, चन्द्र बिंदु, हलन्त, अरबी से लिये अक्षरों के लिए नुक्ता सभी की व्यवस्था इसमें नियमानुसार की गई है । जिसे समझना बहुत ही आसान है । यही विज्ञान है देवनागरी सीखने का, क्रमश: इसलिए हिन्दी का भी अपना भाषा विज्ञान है बशर्ते इसे विज्ञान की तरह समझने का प्रयास किया जाय। विराम चिन्हों का भी विशेष योगदान है जो भावाभिव्यक्ति में विशेष सहायक होते हैं। जैसे पूर्णविराम, अर्ध विराम, लाघव, हँसपद ....।

इसी तरह इसमें स्वरों का भी अपना वैज्ञानिक क्रम है । इतनी वैज्ञानिकता सम्भवत: विश्व की किसी भाषा में नहीं है। शिरो रेखा भी इस लिपि का सकारात्मक पहलू है जो शब्दों के समूह के साथ वर्ण के भेद को स्पष्ट करती है । यथा- म , भ - घ, ध । यह समानता महज हिन्दी में नहीं वरन जिन-जिन भाषाओं ने देव नागरी अपनाई है उन सभी में हमें यह साम्यता देखने को मिलती है । उदाहरण स्वरूप- हम देख सकते हैं हिन्दी, बांगला, पंजाबी, तमिल, कन्नड़ आदि भाषाओं ने इस लिपि को अपनाया है उनमें 'अ' और 'क' अक्षर को देखेंगे सभी में उनके आकारों को लेकर थोड़ी साम्यता हमें दिखाई देती है ।

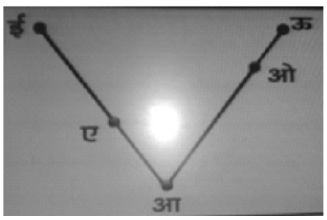

जैसे कि हमने कहा देवनागरी में प्रत्येक ध्वनि भेद हेतु अपना लिपि चिन्ह है । किन्तु रोमन जो की आज अधिकाधिक रूप से प्रयोग हो रही है उसमें स्वर और व्यंजन के लिए कोई अलग अलग वर्ण नहीं सभी साथ लिखे जाते हैं और महज 26 वर्ण से ही सभी अक्षर बनाये जाते हैं यही कारण है कि एक अक्षर का एक से अधिक ध्वन्यात्मक उच्चारण होने से त्रुटियों की सम्भावनाएं बनी रहती है । हम कहेंगे Ball (बॉल) Cat (केट) Anima (अणिमा)Animation (एनिमेशन) अर्थात हर बार 'A' अक्षर का प्रयोग अलग-अलग उच्चारण के साथ हुआ है। यही कारण है कि इसमें वर्तनी सम्बन्धी त्रुटियां बहुतायत में होती है साथ ही सीखने, समझने में भी परेशानी होती है। वहीं शब्दों का नियत अर्थ न होने से शब्दों का अपव्यय भी बहुत है । उदाहरण के लिए 'राष्ट्र' शब्द को लें- 'हिन्दी का ढ़ाई अक्षर का शब्द' लिखने के लिए रोमन में 7 अक्षरों (Rashtra) की आवश्यकता होती है । इस दृष्टि से भी देवनागरी अन्य लिपियों की अपेक्षा अधिक सुघड़ है। इसमें दो व्यंजन बनकर संयुक्त शब्द की भी व्यवस्था है ।

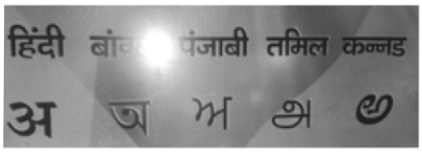

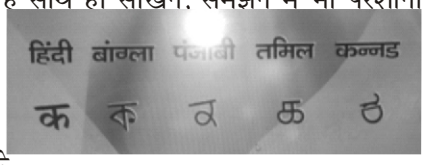

देवनागरी के शब्दकोश में प्रत्येक रिश्तों के लिए भी अलग अलग शब्दों का प्रावधान है, जैसे- चाची, बुआ, ताई, काकी, मामी, नानी, परनानी आदि । इन वृहत रिश्तों की डोर को अंग्रेजी ने महज एक शब्द 'आंटी' में सहेज दिया है। अगर लिपि को संरक्षित न रखा गया तो वह दिन दूर नहीं कि आने वाली पीढ़ी हिन्दी भी अंग्रेजी में लिखेगी। जैसे कि अक्सर महाविद्यलयों में कई अंग्रेजी के बीमार छात्र-छात्राएं कहते हैं, 'मेम क्या हिन्दी का पेपर अंग्रेजी में नहीं दिया जा सकता...?' अफसोस होता है, यह महज भाषा या लिपि के अवमूल्यन का प्रश्न नहीं है यह प्रश्न है संस्कृति और संस्कारों के क्षरण का ।

हम चाहे जितने पाश्चात्य के मोह से ग्रस्त हो लें, हिन्दी आज भी हमारी जड़ों में समाहित है, क्योंकि आज भी देश की 65% जनता इसी भाषा का प्रयोग करती है । प्राचीन समय में विश्व गुरु के पद पर आसीन भारत आज शिक्षा के लिए पराभिमुखी हुआ है, कभी इसका कारण जानने का प्रयास किया होता तो समझ आता कि हमारे ऋषि, पुराणवेत्ता अपनी मातृभाषा में सोचते थे अत: उनका चिंतन मौलिक और अलग हटकर होता था यही भारत की विश्व को

देन थी, जो लोग यहाँ शिक्षा ग्रहण करने को लालायित रहते थे । कहा भी गया है 'व्यक्ति अपनी भाषा में ही अधिक दूर एवं देर तक सोच सकता है।' विचार-मस्तिष्क भाषा और शब्द का त्रिकोण है जो मातृभाषा से अधिक बेहतर संचालित होता है। किन्तु आज हमने अपनी भाषा को उपेक्षित कर पाश्चात्य भाषा को चिंतन का आधार बनाया है। वह भाषा जिसमें न वैज्ञानिकता है न ही एक रूपता। इसने हमारी मौलिकता नष्ट कर दी है ।

आज यूनीकोड देवनागरी पर हावी हो रहा है, युवाओं को हिन्दी भी अंग्रेजी में लिखने का मौका मिल गया। यूनीकोड अंग्रेजी शब्द कम्प्यूटर, विज्ञान, और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र की प्रचलित भाषा है इसे यूनिवर्सल कोड भी कहते हैं। आज यूनीकोड को व्यापक रूप से विश्वव्यापी सूचना के आदान-प्रदान हेतु प्रयोग किया जा रहा है। यद्यपि यह कोड विश्व की लगभग सभी लेखनीबद्ध भाषाओं के लिए सभी कैरेक्टरों को एनकोड करने की क्षमता रखता है। किन्तु इसका प्रयोग बिना प्रशिक्षण के होने से कई त्रुटियां लेखन को प्रभावित कर रही हैं। यथा- चन्द्र बिंदु तो समझिये नदारद हैं ही, शिरोरेखा न लगने से भ्रांतियां उत्पन्न होती हैं । र की मात्राएं कितने प्रकार की होती हैं, कहाँ कौन सी रेफ लगेगी, रोमन में इन मुश्किलों का सामना करना पड़ता है । विराम चिन्ह का अभाव, आधे अक्षरों को लिखने में उलझन, इससे भाषा के गलत रूप का प्रचार हो रहा है साथ ही फोनेटिक इंग्लिश ध्वन्यात्मकता के आधार पर जब टंकण होता है तो उच्चारण की अशुद्धता, उचित आरोह-अवरोह के अभाव में गलत अक्षर टंकित होते हैं। एक ही शब्द को बार-बार कहना पड़ता है जो काफी बाधा उत्पन्न करता है।

कहीं पढ़ा था देश के प्रथम शिक्षा मंत्री मौलाना अबुल कलाम आजाद ने हिन्दी में देवनागरी के स्थान पर रोमन लिपि का ही प्रावधान रखा था । सुनीति कुमार चटर्जी ने तो सभी भारतीय भाषाओं के लिए रोमन लिपि का सुझाव दिया था । हमने वह जंग जीत ली थी तो आज क्यों हम देवनागरी को उपेक्षित कर रोमन की शरण में आये हुए हैं ..? भाषा की यह अवमानना रूप साजिश का, भाषा और संस्कृति के खिलाफ जो रोमन के माध्यम से हमारी युवा पीढ़ी को दिग्भ्रमित कर रही है। बहुत दुख होता है जब पाठ्यक्रमों की पुस्तकों में भी यह त्रुटियाँ पाते हैं । हम अपने दायित्व बोध से बचकर अपराध की दिशा में बढ़ रहे हैं । जी हाँ, मातृभाषा के प्रति अपराध । लिपि के सही रूप को बच्चों के समक्ष प्रस्तुत न कर हम भाषा की धरोहर को कैसे भविष्य के हाथ में सुरक्षित महसूस कर पाएंगे ?

आज जिस तरह बच्चे हिन्दी में गिनती और पहाड़े भूल गए हैं, जिन्दगी का गणित न भूल जाएँ । उन्हें थर्टी सिक्स कहो तो समझ आएगा मगर छत्तीस कहें तो उनकी कलम रुक जाती है। डर है कहीं ऐसा न हो हिन्दी वर्णमाला /देवनागरी लिपि भी भूल जाएं तब हिन्दी का क्या रूप हमारे समक्ष होगा इसकी कल्पना मात्र से भयभीत हूँ । आज यूँ ही देश कई आतंकी शक्तियों की गिरफ्त में है ऐसे में भाषा पर आतंक न बढ़ने दें इस बात का ख्याल रखना हमारी जिम्मेदारी है। भाषा की गरिमा तभी सुरक्षित रह सकती है जब उसकी लिपि का हम संवर्धन करें ।

"देवनागरी लिपि वैज्ञानिक, हम इसको अपनायें / इसको प्रतिष्ठित करने का अभियान चलायें।

ध्वनि, वर्तनी और उच्चारण युक्त यह लिपि / चलो, आओ भावी पीढ़ी को हम यह समझायें ।"

जय भारती यह भाषा

----------०००----------

-डॉ. लता अग्रवाल
73, यश बिला भवानी धाम, फेस-1, नरेला शन्करी
भोपाल-462041 (म.प्र.)

पृष्ठ संख्या 45 का शेष

अखबार पढ़ना बंद कर दूँगा और न केवल मैं बंद करूँगा बल्कि मैं अपने दस अभिन्न मित्रों को तैयार करूँगा कि वे भी आपका अखबार पढ़ना बंद कर दें।

इसीलिए हम तमाम हिन्दी भाषियों से आग्रह करते हैं कि वे इस पत्र अभियान में शामिल हों और अपनी मातृभाषा की हत्या के खिलाफ खड़े हों। यदि आपकी माँ बीमार है और उसके इलाज के लिए आप पाँच हजार रुपये खर्च कर सकते हैं तो मातृभाषा के लिए पचास रुपये खर्च करें और पचास रुपये के पत्र खरीद कर तमाम ऐसे अखबारों को निवेदन करने के लिए भेजें। न केवल खुद भेजें बल्कि अपने हर मित्र और पड़ोसी को भी पत्र लिखने के लिए प्रेरित करें। यदि आप किन्हीं वजहों से अपने नाम से नहीं लिख पा रहे हैं, तो किसी अन्य के नाम से विरोध में ऐसा पत्र अवश्य लिखें। उम्मीद है अपनी मातृभाषा/हिन्दी की रक्षा के लिए इतनी हिम्मत जुटाएँगे।

गद्य कोश से साभार

उस भाषा को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए जो देश के सबसे बड़े हिस्से में बोली जाती हो, अर्थात् हिन्दी।

-रवीन्द्रनाथ ठाकुर

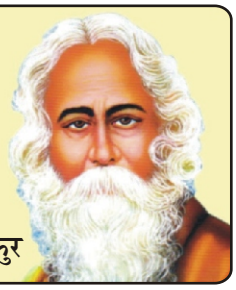

हिन्दी के प्रति विदेशी विद्वानों के विचार

हिन्दी दुनिया की महान भाषाओं में से एक है। भारत को समझने के लिए हिन्दी का ज्ञान अनिवार्य है। हिन्दी का महत्व आज इसलिए और भी बढ़ गया है, क्योंकि भारत आज शिक्षा, उद्योग और तकनीकी हिसाब से दुनिया का अग्रणी देश है।

-डॉ. मैग्रेगर, इंग्लैंड
(कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय)

मैं चाहता हूँ कि भारत की राजभाषा तेरह कोहिनूरों का किरीट धारण कर भारतीय रंगमंच पर अवतीर्ण हो और मैं उसके इस रूप को इन्हीं आँखों से इसी जीवन में देख सकूँ।

-डॉ. ओदोलेन स्मेकल
(चैकोस्लावाकिया)

यही (हिन्दी) एक भाषा है, जिसमें दो विभिन्न प्रांतों के लोग आपस में बातचीत कर सकते हैं। यह भारत में सर्वत्र समझी जाती है, क्योंकि इसका व्याकरण भारत की अधिकांश भाषाओं के समान है और इसका शब्दकोश, सबकी सम्मिलित सम्पत्ति है।

-जार्ज ग्रियर्सन

राष्ट्रभाषा का प्रश्न राष्ट्रीय चरित्र, उन्नतिशीलता तथा योग्यता का दर्पण है।

-डॉ. ओदोलेन स्मेकल
(चैकोस्लावाकिया)

लोकतंत्र की सफलता इस बात में है कि पूरी जनता शासन का साथ दें। और जनभाषा को राजभाषा बनाए बिना यह हो नहीं सकता। **-फादर कामिल बुल्के**

राजभाषा के रूप में विदेशी भाषा का प्रयोग मानसिक पराधीनता है। हिन्दी का शब्दकोश अंग्रेजी से तीन गुना बड़ा है।

-हिन्दी प्रचार परिषद्, यूरोप (लन्दन)

मानव के मस्तिष्क से निकली हुई वर्णमालाओं में 'नागरी' सबसे अधिक पूर्ण माला है।

-जॉन जिलक्राइस्ट

देवनागरी अक्षरों से बढ़कर पूर्ण और उत्तम अक्षर दूसरे नहीं है। **-प्रो. मोनियम विलियम**

जब तक भारत में अंग्रेजी का बोलबाला है, तब तक इस देश की एकता तथा उन्नति नहीं होगी।

-योहचि युकिशिता (जापान)

संस्कृतनिष्ठ हिन्दी ही एक ऐसी आधुनिक भाषा है, जो प्राचीन भारतीय सभ्यता की महिमा का प्रतिबिंब प्रस्तुत कर सकती है और इस देश की आत्मा को समझने में पूर्ण सहायता देती है।

-प्रो. ओदोलेन स्मेकल (चौकोस्लोवाकिया)

जब तक भारतीय इस मोह को नहीं छोड़ेंगे कि अंग्रेजी नये युग का जनेऊ है जिसके बिना आदमी का आदर नहीं होता, जब तक वे अपनी सांस्कृतिक स्वतंत्रता पर उतना गर्व नहीं करेंगे, जितना अपनी राजनीतिक स्वतंत्रता पर, तब तक हिन्दी या किसी भारतीय भाषा का पूर्ण विकास नही हो सकेगा।

-चार्ल्स नैपियर

किसी विदेशी भाषा का किसी स्वतंत्र राष्ट्र के राजकाज और शिक्षा का माध्यम होना सांस्कृतिक दासता है।

-वाल्टेर चेनिंग

भारत में अनेक भाषाएं बोली जाती हैं। उन भाषाओं के बीच में अंग्रेजी कैसे सम्पर्क भाषा बन सकती है ? क्या दिल्ली का रास्ता लंदन से होकर गुजरता है ? अंग्रेजी अलगाव पैदा करती है। जनता और नेता के बीच, राजा और प्रजा के बीच से अंग्रेजी हटेगी, तो उत्तर भारत के लोग भी दक्षिण की भाषाएं सीखेंगे। हिन्दी को अंग्रेजी का स्थान लेना है, प्रादेशिक भाषाओं का स्थान नहीं। हिन्दी बढ़ेगी तो अन्य भारतीय भाषाएं घटेंगी-यह ठीक नहीं है। हिन्दी बढ़ेगी तो अंग्रेजी घटेगी या हटेगी-यह ठीक है।

-आलफंस वातवेल, हॉलैंड

जो लोग एक सी भाषा बोलते हैं, उनमें पारस्परिक आकर्षण होता है। इसी से राष्ट्रीय एकता दृढ़ है।

-जोजेक

मेरे दोस्त उस भाषा में मेरे लिए शुभ की कामना मत कर जिसकी ध्वनि मुझे गुलामी के दिनों की याद दे जाती है। चाबुक की बैछारों का आदेश निकलता था, जिस भाषा में, उस भाषा को मेरी भाषा मत कह मेरे दोस्त।

-अभिमन्यु अनत (मॉरीशस)

हिन्दी हर प्रदेश में संयोजक भाषा के रूप में फैल गई है। यही भारत की राष्ट्रभाषा बन सकती है। मेरा दावा है कि भारत में अंग्रेजी का बोलबाला है, तब तक इस देश की एकता तथा उन्नति नहीं होगी, अत: यथाशीघ्र अपनी भाषा को राष्ट्रभाषा की प्रतिष्ठा देनी चाहिए, नहीं तो भारत इस सँसार में और अधिक पिछड़ जायेगा।

-योहचि युकिशिता (जापान)

हिन्दी आधुनिक राष्ट्रीय एकता और अखण्डता की प्रतीक एवं बाँधने वाला बंधन है। सांस्कृतिक चेतना की बागडोर है।

-मैक्स हिंडवर्ट बोहम

राष्ट्रीय एकता, अखण्डता एवं जातियों का उत्थान-पतन सदा उनकी भाषा के समानांतर होता है।

-प्रो. हैज

कोई भी राष्ट्र अपनी भाषा को छोड़कर राष्ट्र नहीं कहला सकता, भाषा की रक्षा सभी सीमाओं की रक्षा से भी जरूरी है।

-थॉमस डेविड

मैं हिन्दी को अपनी दूसरी मातृभाषा मानता हूँ। इसका पूर्ण ज्ञान मेरे लिए सोमरस पान है। इसका पान करने से मुझे अभिनव प्राण मिलता है। **-डॉ. ओदोलेन स्मेकल (चैक साहित्यकार)**

भारत की अस्मिता अंग्रेजी के कारण इतनी धूमिल नहीं होती, जितनी मानक हिन्दी के अपर्याप्त ज्ञान के कारण। ...मानक हिन्दी वह बिन्दु है, जिसमें पूरे भारत की सिंधुकालीन सभ्यता तथा गौरवशाली सांस्कृतियां समाहित है।...मानक हिन्दी वह प्रांजल, प्रभावशाली भाषा है, जिसमें पूरे भारत की आत्मा परिलक्षित होती है,सारे देश की अस्मिता का दर्पण।

-डॉ. ओदोलेन स्मेकल (चेक साहित्यकार)

मेरा यह निश्चित मत है कि भारत की सम्पर्क भाषा हिन्दी-सँस्कृत सम्मत ही हो सकती है, चालू भाषा नहीं।

-प्रो. विंस्की (पोलिश साहित्यकार)

हिन्दी सीखे बिना, भारतीयों के दिल तक नहीं पहुँचा जा सकता। **-डॉ. लोथर (जर्मन)**

हिन्दी एक सरल भाषा है। उसका साहित्य भी समृद्ध है। यही नहीं उसके बोलने वालों की संख्या भी बहुत बड़ी है। अत: मेरी दृष्टि में हिन्दी को सँयुक्त राष्ट्र की एक भाषा के रूप में स्वीकार कर लिया जाना चाहिए।

-गोदाई हैट्रिक स्खोस्तर (हॉलैंड)

हिन्दी न केवल पुराने समय से चलती आ रही साहित्यिक भाषा के रूप में है, बल्कि भारत की राष्ट्रभाषा के रूप में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभानी है।

-डॉ. मोनिक थियन होस्टमन

हिन्दी न केवल देश के करोड़ों लोगों की सांस्कृतिक भाषा है, बल्कि वह बोलने समझने की संख्या की दृष्टि से दुनिया की तीसरी भाषा है। भारत के सभी धर्मों और विभिन्न भाषा-भाषियों ने हिन्दी के विकास में योगदान दिया है। वह किसी विशिष्ट वर्ग, प्रदेश या समुदाय की भाषा न होकर, भारतीय जनता की भाषा है।

-फादर कामिल बुल्के

हिन्दी का पूर्ण रूपेण ज्ञान, है मेरे लिए सोमरस पान ।
जितनी बार इसे पिया, उतने ही जीवन जिया ।।

-डॉ. ओदोलेन स्मेकल (चैक साहित्यकार)

निर्मलकुमार पाटोदी,
विद्या-निलय, 45, शांति निकेतन
(बॉम्बे हॉस्पीटल के पीछे), इन्दौर-452010 (म.प्र.)

हिन्दी का श्रृंगार राष्ट्र के सभी भागों के लोगों ने किया है, वह हमारी राष्ट्रभाषा है।
-चक्रवर्ती राजगोपालाचारी

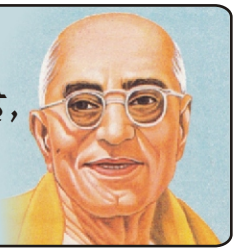

मेधावी छात्र एवं शिक्षक सम्मान समारोह-2019

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय कला केन्द्र, नई दिल्ली-110001

सर्वाधिक प्रविष्टियों के आधार पर 'कुलाची हंसराज स्कूल, अशोक विहार, दिल्ली' को मिला वर्ष-2019 का 'भाषा प्रहरी सम्मान' ।

B.K. SETHI
+91-9654274072
+91-8745920612

NationsBook .in

Online Book Store

www.nationsbook.in info.nationsbook@gmail.com https://nationsbook.blogspot.com

अब आप www.nationsbook.in पर कम्प्यूटर या लैपटॉप से
ऑनलाइन पुस्तकों का ऑर्डर करें और घर बैठे पुस्तकों को प्राप्त करें ।

Categories are available

* Sprtiual * Hindi Literature * Poems * Ghazals * Novels
* Science and Technicals * Text Books * English Literature * Art Books
* English Books * Exams Entrance Books * Computers Books * Media Books Etc.

Office : 7/253, Ground Floor, Sant Nirankari Colony, Delhi-110009

RNI No. : DELHIN/2017/73904

हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी

(भारतीय भाषाओं के प्रचार-प्रसार और संवर्धन को समर्पित संस्था)

पंजीकृत कार्यालय : 3675, राजा पार्क, रानी बाग, दिल्ली-110034

दूरभाष : 09873556781, 09968097816

E-mail : info@hindustanibhashaakadami.com
hindustanibhashabharati@gmail.com
Website : www.hindustanibhashaakadami.com